ग्रंथमाला नंबर ६ ठो B.

श्रीमद्विजयानंदसूरि (आत्मारामजी महाराज)

विरचीत

श्री

जैनधर्म विषयिक प्रश्नोत्तर.

छपावी प्रसिद्ध करनार

श्री जैन आत्मानंद सभा.

भावनगर.

आवृत्ति त्रीजी.

वीर संवत २४३५ आत्म सं. १४ वि. सं. १९६५

भावनगर—श्री "विद्या विजय" प्रिन्टींग प्रेसमां

शाह पुरुषोत्तमदास गीगाभाइए छाप्युं.

कींमत आठ आना.



प्रस्तावना.

परोपकारी महात्माओना लेखोनी महत्वना अपूर्व होय छे. तेना भोक्ता थवानो आधार तेना ग्राहकना अधिकार उपर रहे छे, एवा अपूर्व लेखोनुं रहस्य आदर पूर्वक अभ्यासथीज प्रगट थाय छे, अने तेनुं आदर पूर्वक श्रवण पठन अने मनन करवाथीज अने ते फळदायी नीवडे छे

पवित्र जैन दर्शन जणावे छे के आ जगतमां अनादि कालथीज मिथात्व छे जे मानवाने आपणने प्रत्यक्षादि कारणो मोजुद छे. आवा मिथ्यात्वना कारणरूप अज्ञानरुपी अंधकारनो नाश करवा परम उपकारी पूज्यपाद गुरू श्री विजयानंदसूरी (आत्मारामजी महाराजे) ए आ जैनधर्म विषयिक प्रश्नोत्तर नामनो ग्रंथ रच्यो छे. आ अने आ सिवायना बीजा आ महात्माए बनावेला ग्रंथो प्रथमथीज प्रशंसनीय थता आवेला छे

आर्हत धर्मनी जे भावना तेमना मगजमां जन्म पामेली ते लेख रुपे बाहार आवनाज आखी दुनीयाना पंडीतो-ज्ञानीओ धर्म गुरुओ–लेखको अने सामान्य लोको उपर जे असर करे छे तेज तेनी उपयोगिता दर्शाववाने बस छे.

जैनधर्म अनादि कालथीज छे, अने ते बौद्धधर्मथी तदन

अलग अने पेहेलाथीज छे, ते तेमज जैनमतना पुस्तकोनी उत्पत्ति–कर्मनुं स्वरुप–जीनप्रतिमानी पूजा करवानों तीर्थंकरोए करेलो उपदेश विगेरे बीजी केटलीक उपयोगी बाबतोनों आ ग्रंथमां समावेश करेलो छे

वर्तमान कालमां व्यवहारिक केलवणी लीधेला युवको जेने जैनधर्मनुं तत्व शुं छे तेनाथी अजाण छे, तेओने तेमज अन्य धर्मीओने आ ग्रथ आद्यंत वांचवाथी जैनधर्मनुं छुटुं छुटुं स्वरुप केटलेक अंशे मालम पडे तेम छे.

कोइपण निष्पक्षपाती तत्व जिज्ञासु पुरूष आ ग्रंथनु स्वरुप आद्यंत अवलोकशेतो एक जैनना महान् विद्वाने भारतवर्षनी जैन प्रजा उपर आवा उत्तम ग्रथो रची गहन उपकार कीधो छे ते तेम जणाशे साथे आ विद्वान शिरोमणी महाशय पुरुष सामत काले विद्यमान नथी तेने माटे अतुल खेद प्राप्त थशे.

छेवटे अमारे आनद सहित जणाववु पडे छे के मरहुम पूज्यपादना हृदयमा अनगार धर्मनी साथे परोपकारपणानी पवित्र छाया जे पडी हती ते छाया तेमना परिवार मडलना हृदयमा उतरी छे पोताना गुरुनु यथाशक्ति अनुकरण करवाने ते शिष्य वर्ग त्रिकरण शुद्धिथी प्रवर्त्ते छे तेनी साथे विद्या, ऐक्यता स्वार्पण अने परोपकार बुद्धि तेमना शिष्य वर्गमां प-

त्यक्ष मूर्त्तिमान जेवामा आवे छे अने तेओ परम सात्विक होइ सर्वने तेवाज देखे छे, अने तेवाज करवा इच्छे छे अने तेओनुं जीवन गुरु भक्तिमय छे. आवा केटलाएक गुणोने लइने आवा महान् ग्रथोने प्रसिद्धिमा लावी जैन समुहमा मूकी जैनधर्मनु अजवाळु पाडवा आ ग्रंथनी बीजी आवृत्ती करवानो समय आव्यो छे. जो के आ ग्रथनी प्रथम आवृत्ति आजथी वीश वर्ष उपर संवत् १९४९नी साल्मा मरहुम गुरुराजनी संमत्तीथी राजे श्री गीरधरलाल हीराभाइ पालणपुर दरबारी न्यायाधीशे बाहार पाडी हती, परतु तेनी एक नकल हालमा नहीं मलवाथी ते पूज्यपाद गुरुराजना परिवार मंडळनी आज्ञानुसार तेनी आ बीजी आवृत्ति अमोए बाहार पाडेली छे

आवा उपयोगी महान् ग्रंथ अमारी सभा तरफथी बहार पडे तेमा अमोने मोटुं मान छे जेथी ते बाबतमा अमोने आज्ञा आपनार ए महान् गुरुराजना परिवार मडळनो अमो उपकार मानवो आ स्थळे भूली जता नथी

छेवटे आ ग्रंथनी प्रथम आवृत्ति प्रकट करावनार राजेश्री गीरधरलाल हीराभाइए अमारी सभा तरफथी बीजी आवृत्ति

प्रकट करवानी आपेल मान भरेली परवानगी माटे तेओनो पण उपकार मानीए छीए.

आ ग्रंथ छपावताना दरम्यान कच्छ मोटी खाखरना रेहेनार शेठ रणसीभाइ तेमज रवजीभाइ तथा नेणसीभाइ देवराजे तेनी सारी सख्यामा कोपीओ लेवानी इच्छा जणाववाथी आवा ज्ञान खाताना कार्यना उत्तेजनार्थे आ तेओए करेली मदद माटे अमो तेओने धन्यवाद आपीए छीए अने तेमा रवजीभाइ देवराजे खरीदेल बुको तमाम पोते पोता तरफथी वगर कीमते आपवाना होवाथी तेमना आवा स्तुती भरेला कार्यने माटे अमोने वधारे आनंद थाय छे

ग्रंथनी शुद्धता अने निर्दोषता करवानी सावधानी राख्या छतां कदी कोइ स्थले दृष्टी दोषथी के प्रमादथी भूल थयेली मालम पडे तो सुज्ञ पुरुषो सुधारी वांचशो अने अमोने लखी जणावशो तो तेओनो उपकार मानीशुं



त्रीजी आवृत्तिनी प्रस्तावना

आ ग्रंथनी आ त्रीजी आवृत्ति छे आ ग्रंथ नानो होवा छता तेनी उपयोगीता अने महत्वता एटली वधी जणायेली छेके टुंक समयमा तेनी त्रीजी आवृत्ति करवाने सभा भाग्यशाळी थइ छे. आ टुंकी मुदतमा ग्रथनी एक हजार नकल खपी जवाथी अने उपरा उपर तेनी मागणीओ आववाथी, सुधारा वधारा साथे सुदर पाका वाइन्डींगथी आ त्रीजी आवृत्ति करवानो समय प्राप्त थयो छे आ ग्रंथ एक महान विद्वान समर्थ नररत्न आचार्यमहाराज अने हिंदुस्ताननी जैन कोमना महान उपकारी श्रीमद्विजयानदसूरि आत्मारामजी महाराज खुदनी कृतिनो होवाथी, ते दिवसानुदिवस वधारे प्रशंसनीय थतो आवतो होवाथी दरेक जैन बंधुओए अवश्य आवा ग्रंथना ग्राहक थइ ज्ञान खाताना कार्यने उत्तेजन आपवुं ए पोतानुं कर्त्तव्य छे.

वीर संवत २४३९
आत्म संवत १४
वीर संवत १९६९
ना बीजा श्रावणशुद
१ आत्मानदभुवन

श्री जैन आत्मानंद सभा

भावनगर.

जैन प्रश्नोत्तर.

अनुक्रमणिका.

॥ श्री अर्हं नमः ॥

जैन धर्म विषयिक प्रश्नोत्तर

प्रश्न—जिन और जिनशासन इन दोनो
ब्दोंका अर्थ क्याहै.

उत्तर—जो राग द्वेष क्रोध मान माया
ोभ काम अज्ञान रति अरति शोक हास्य जु-
प्सा अर्थात् घ्रिणा मिथ्यात्व इत्यादि भाव श-
ओंको जीते तिसको जिन कहते है यह जिन
ब्दका अर्थ है. ऐसे पूर्वोक्त जिनकी जो शि-
ा अर्थात् उत्सर्गापवादरूप मार्गद्वारा हितकी
ाप्ति अहितका परिहार अंगीकार और त्याग
रना तिसका नाम जिनशासन कहतेहे. तात्प-
यह हैकि जिनके कहे प्रमाण चलना यह जि-

नशासन शब्दका अर्थहै. अभिधान चिंतामणि और अनुयोगद्वार वृत्यादिमेंहै.

प्र. २—जिनशासनका सार क्याहै.

उ—जिनशासन और द्वादशांग यह एकही के दो नामहै इस वास्ते द्वादशांगका सार आचारंगहै और आचारंगका सार तिसके अर्थका यथार्थ जानना तिस जाननेका सार तिस अर्थका यथार्थ परकों उपदेश करना तिस उपदेशका सार यहकि चारित्र अगीकार करना, अर्थात् प्राणिवध १ मृषावाद २ अदत्तादान ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ रात्रिभोजन ६ इनका त्याग करना इसकों चारित्र कहतेहै अथवा चरणसित्तरीके ७० सित्तेर भेद और करण सित्तरिके ७० सित्तेर भेद ये एकसौ चालीस १४० भेद मूलगुण उत्तरगुणरूप अंगीकार करे तिसकों चारित्र कहते है तिस चारित्रका सार

निर्व्वाणहै, अर्थात् सर्व कर्मजन्य उपाधिरूप अग्निसें रहित शीतलीभूत होना तिसका नाम निर्व्वाण कहतेहैं तिस निर्व्वाणका सार अव्याबाध अर्थात् शारीरिक और मानसिक पीडा रहित सदा सिद्ध शुद्ध स्वरूपमे रहना यह पूर्वोक्त सर्व जिनशासनका सारहै यह कथन श्री आचारंगकी निर्युक्तिमेंहै.

प्र. ३—तीर्थंकर कौन होते है और किस जगें होतेहै और किस कालमे होतेहै.

उ.—जे जीव तीर्थंकर होनेके ज्ञवसें तीसरे भवमें पहिलें वीस स्थानक अर्थात् वीसें धर्मके कृत्य करे तिस कृत्योंसे बडा भारी तीर्थंकरनामकर्मरूप पुन्य निकाचित उपार्जन करे तव तहांसे काल करके प्रायें स्वर्ग देवलोकमें उत्पन्न होतेहै तहांसें काल कर मनुष्य क्षेत्रमें बहुत भारी

रिद्धि परिवारवाले उत्तम शुद्ध राज्यकुलमें उत्पन्न होतेहै जेकर पूर्व जन्ममें निकाचित पुन्यसें भोग्य कर्म उपार्जन करा होवे तबतो तिस भोग्य कर्मानुसार राज्य भोगविलास मनोहर भोगतेहै, नही भोग्यकर्म उपार्जन करा होवे तब राज्यभोग नही करतेहै. इन तीर्थंकर होनेवाले जीवांको माताके गर्भमेंही तीन ज्ञान अर्थात् मति श्रुति अवधि अवश्यमेवही होते है, दीक्षाका समय तीर्थंकरके जीव अपने ज्ञानसेंही जान लेतेहै जेकर माता पिता विद्यमान होवें तबतो तिनकी आज्ञा लेके जेकर माता पिता विद्यमान नही होवें तब अपने भाइ आदि कुटुंबकी आज्ञा लेके दीक्षा लेनेके एक वर्ष पहिले लोकांतिक देवते आकर कहते है हे भगवान्! धर्म तीर्थ प्रवर्त्तावो. तद पीछे एक वर्ष पर्यंत तीनसो कोटि अठ्यास्सी करोड

अैसीलाख इतनी सोने मोहरें दान देके बडे म-
होत्सवसें दीक्षा स्वयमेव लेतेहै किसिकों गुरु
नही करतेहै क्योंकि वेतो आपही त्रैलोक्यके गुरु
होनेवालेहे और ज्ञानवंतहै तदपीछे सर्व पापके
त्यागी होके महा अद्भुत तप करके घातीकर्म चार
क्षय करके केवली होतेहै. तदपीछे संसार तारक
उपदेश देकर धर्मतीर्थके करनेवाले अैसे पुरुष
तीर्थंकर होतेहै. उपर कहे हुए वीस धर्मकृत्योंका
स्वरूप संक्षेपसे नीचे लिखनेहे. अरिहंत १ सिद्ध
२ प्रवचन संघ ३ गुरु आचार्य ४ स्थविर ५ ब-
हुश्रुत ६ तपस्वी ७ इन सातों पदोंका वात्सल्य
अनुराग करनेसें इन सातोंके यथावस्थित गुण
उत्कीर्तन अनुरूप उपचार करनेसें तीर्थंकर नाम-
कर्म जीव बांधताहै इन पूर्वोक्त सातों अर्हतादि
पदोंका अपने ज्ञानमें वारं वार निरंतर स्वरूप

चिंतन करे तो तीर्थंकर नामकर्म बांधे ८ दर्शन सम्यक्त ९ विनय ज्ञानादि विषये १० इन दोनोंकों निरतिचार पालेतो तीर्थंकर नामकर्म बांधे. जो जो संयमके अवश्य करने योग्य व्यापारहै तिसकों आवश्यक कहतेहै तिसमें अतिचार न लगावे तो तीर्थंकर नामकर्म बांधे ११ मूलगुण पांच महाव्रतमें और उत्तरगुण पिंड विशुद्ध्यादिक ये दोनो निरतिचार पाले तो तीर्थंकर नामकर्म बांधे १२ क्षण लव मूहुर्त्तादि कालमें संवेग भावना शुभ ध्यान करनेसें तीर्थंकर नामकर्म बांधताहै १३ उपवासादि तप करनेसें यति साधुजनकों उचित दान देनेसें तीर्थंकर नामकर्म बांधताहै १४ दश प्रकारकी वैयावृत्य करनेसें तोप १५ गुरुआदिकांकों तिनके कार्य करणेसे गुरु आदिकोंके चित्त स्वास्थरूप समाधि उपजावनेसे

ती० १६ अपूर्व अर्थात् नवा नवा ज्ञान पढनेसें ती० १७ श्रुत नक्ति प्रवचन विपये प्रन्नावना करनेसें ती० १८ शास्त्रका बहुमान करनेसें ती० १९ यथाशक्ति अर्हदुपदिष्ट मार्गकी देशनादि करके शासनकी प्रन्नावना करे तो तीर्थंकर नामकर्म बांधेहै २० कोई जीव इन वीसों कृत्योंमें चाहो कोइ एक कृत्यसें तीर्थंकर नामकर्म बांधे है. कोइ दो कृत्यांसे कोइ तीनसे एवं यावत् कोइएक जीव वीस कृत्योंसें बांधेहै यह उपरका कथन ज्ञाता धर्मकथा १ कल्पसूत्र २ आवश्यकादि शास्त्रोंमेंहै. और तीर्थंकर पांच महाविदेह पांच नरत पांच ऐरवत इन पंदरां क्षेत्रोंमें उत्पन्न होते है और इस नरतखंममें आर्य देश साढे पच्चीसमे उत्पन्न होतेहै वे देश २५॥ साढे पच्चीस ऐसेहै.

उत्तर तर्फ हिमालय पर्वत और दक्षिण तर्फ

विंध्याचल पर्वत और पूर्व पश्चिम समुद्रांत तक इसकों आर्यावर्त्त कहते है इसके बीचही साढे- पचवीस देशहै तिनमे तीर्थंकर उत्पन्न होतेहै यह कथन अभिधान चिंतामणि तथा पन्नवणाआदि शास्त्रोमेंहै. अवसर्पिणि कालके ६ आरे अर्थात् ६ हिस्से है तिनमे तीसरे चौथे विभागसे तीर्थंकर उत्पन्न होतेहै और उत्सर्पिणि कालके ६ विभागोमेंसें तीसरे चोथे विभागमे उत्पन्न होतेहै. यह कथन जंबुद्वीप प्रज्ञप्ति आदि शास्त्रोमेंहै.

प्र. ४—तीर्थंकर क्या करतेहै और तीर्थंकरोके गुणोका वरनन करो.

उ.—तीर्थंकर भगवंत बदलेके उपकारकी इच्छा रहित राजा रंक ब्राह्मण और चंडाल प्रमुख सर्व जातिके योग्य पुरुषांकों एकांत हितकारक संसार समुद्रकी तारक धर्मदेशना करतेहै और

तीर्थंकर भगवंतके गुणतो इंद्रादिभी सर्व वरनन् नही करसक्तेहै तो फेर मेरे अल्प बुद्धीवालेकी तो क्या शक्तिहै तोभी संक्षेपसें भव्यजीवांके जानने वास्ते थोमासा वरनन करतेहै. अनंत केवल ज्ञान १ अनंत केवल दर्शन २ अनंत चारित्र ३ अनंत तप ४ अनंत वीर्य ५ अनत पांच लब्धि ६ क्षमा ७ निर्लोभता ८ सरलता ९ निरभिमानता १० लाघवता ११ सत्य १२ संयम १३ निरिछकता १४ ब्रह्मचर्य १५ दया १६ परोपकारता १७ राग द्वेष रहित १८ शत्रु मित्रभाव रहित १९ कनक पथर इन दोनो ऊपर सम भाव २० स्त्री और तृण ऊपर समभाव २१ मांसाहार रहित २२ मदिरा पान रहित २३ अभक्ष्य भक्षण रहित २४ अगम्य गमन रहित २५ करुणा समुद्र २६ सूर २७ वीर २८ धीर २९ अक्षोभ्य ३० परनिंदा रहित ३१

अपनी स्तुति न करे ३१ जो कोइ तिनके साथ विरोध करे तिसकोंभी तारनेकी इछावाले ३२ इत्यादि अनंत गुण तीर्थंकर भगवंतोमेंहै सो कोइभी शक्तिमान नहीहै जो सर्व गुण कह सके और लिख सके.

प्र. ५—जैन मतमें जे क्षेत्र महाविदेहादि कहै तहां इहांका कोइ मनुष्य जा सक्ताहै कि नही.

उ.—नही जा सकताहै क्योंकी रस्तेमें बर्फ पाणी जम गयाहै और बडे बडे ऊंचे पर्वत रस्तेमेंहै बडी बडी नदीयों और भडंड जंगल रस्तेमेंहै अन्य बहुत विघ्नहै इस वास्ते नही जासक्ताहै.

प्र. ६—भरत क्षेत्र कोनसाहै और कितना लांबा चौडाहै.

उ.—जिसमें हम रहतेहै यही भरतखंडहै इसकी चौडाइ दक्षिणसे उत्तर तक ५२६० किं-

चित अधिक उत्सेधांगुलके हिसाबसें कोस होतेहै और वैताढ्य पर्वतके पास लंबाइ कुछक अधिक ९०००० नेवु हजार उत्सेधांगुलके हिसाबसें कोस होतेहै चीन रूसादि देश सर्व जैन मतवाले भरत खंडके बीचही मानतेहै यह कथन अनुयोगद्वा-रकी चूर्णि तथा अंगुल सत्तरी ग्रंथानुसारहै कित नेक आचार्य भरतखंडका प्रमाण अन्यतरेंके योजनोंसें मानतेहैं परं अनुयोगद्वारकी चूर्णिकर्त्ता श्री जिनदासगणि क्षमाश्रमणजी तिनके मतकों सिद्धांतका मत नही कहतेहै.

प्र. ७—भरत क्षेत्रमे आजके कालसें पहिला कितने तीर्थंकर हूएहै.

उ.—इस अवसर्पिणि कालमें आज पहिला चौवीस तीर्थंकर हूएहै जेकर समुच्चय अतीत का-लका प्रश्न पूछतेहो तव तो अनंत तीर्थंकर इस

नरतखंडमें होगएहै.

प्र. ८–इस अवसर्पिणि कालमे इस नरतखंडमें चौवीस तीर्थंकर हूएहै तिनके नाम कहो.

उ.–प्रथम श्री ऋषनदेव १ श्री अजितनाथ २ श्री संनवनाथ ३ श्री अनिनंदननाथ ४ श्री सुमतिस्वामी ५ श्री पद्मप्रन ६ श्री सुपार्श्वनाथ ७ श्री चंद्रप्रन ८ श्री सुविधिनाथ पुष्पदंत ९ श्री शीतलनाथ १० श्री श्रेयांसनाथ ११ श्री वासुपूज्य १२ श्री विमलनाथ १३ श्री अनंतनाथ १४ श्री धर्मनाथ १५ श्री शांतिनाथ १६ श्री कुंथुनाथ १७ श्री अरनाथ १८ श्री मल्लिनाथ १९ श्री मुनिसुव्रतस्वामी २० श्री नमिनाथ २१ श्री अरिष्टनेमि २२ श्री पार्श्वनाथ २३ श्री वर्द्धमानस्वामी महावीरजी २४ ये नामहै.

प्र. ९–इन चौवीस तीर्थंकरोंके माता पिताके नाम क्या क्याथे.

उ.—नाभि कुलकर पिता श्रीमरुदेवीमाता १ जितशत्रु पिता विजय माता २ जितारि पिता सेना माता ३ संबर पिता सिद्धार्थ माता ४ मेघ पिता मंगला माता ५ धर पिता सुसीमा माता ६ प्रतिष्ठ पिता पृथ्वी माता ७ महसेन पिता लक्ष्मणा माता ८ सुग्रीव पिता रामा माता ९ दृढरथ पिता नंदामाता १० विश्नु पिता विश्नुश्री माता ११ वसुपूज्य पिता जया माता १२ कृतवर्म्मा पिता श्यामा माता १३ सिंहसेन पिता सुयशा माता १४ भानु पिता सुव्रता माता १५ विश्वसेन पिता अचिरा माता १६ सूर पिता श्री माता १७ सुदर्शन पिता देवी माता १८ कुंभ पिता प्रभावती माता १९ सुमित्र पिता पद्मावती माता २० विजयसेन पिता वप्रा माता २१ समुद्रविजय पिता शिवा माता २२ अश्वसेन पिता

वामा माता २३ सिद्धार्थ पिता त्रिशला माता २४ ये चौवीस तीर्थंकरोके क्रमसें माता पिताके नाम जान लेने चौवीसही तीर्थंकरोके पिता राजेथे. वीसमा २० और बावीसमा ये दोनो हरिवंश कुलमे उत्पन्न हुएथे और गौतम गोत्री थे शेष २२बावीस तीर्थंकर इक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न हुएथे और काश्यप गोत्री थे.

प्र. १०—श्री ऋषभदेवजीसें पहिला इस भरतखंडमे जैन धर्म था के नही.

उ.—श्री ऋषभदेवजीसें पहिला इस अवसर्पिणि कालमें इस भरतखंडमे जैनधर्मादि मतकाभी धर्म नहीथा इस कथनमे जैन शास्त्रही प्रमाणहै.

प्र ११—जैसा धर्म श्रीऋषभदेवस्वामीनें चलायाथा तैसाही आज पर्यंत चलाआताहै

वा कुछ फेरफार तिसमें हुआहै.

उ.–श्रीरूषभदेवजीने जैसा धर्म चलायाथा तैसाही श्रीमहावीर भगवंते धर्म चलाया इसमें किंचित्‌मात्रभी फरक नहीहै सोइ धर्म आजकाल जैन मतमें चलताहै.

प्र.१२–श्री महावीरस्वामी किस जगें जन्मेथे और तिनके जन्म हुआंको आज पर्यंत १९४५ संवत तक कितने वर्ष हुएहै.

उ.–श्री महावीरस्वामी क्षत्रियकुंडग्राम नगरमें उत्पन्न हुएथे और आज संवत१९४५तक २४८७ वर्षके लगभग हुएहै. विक्रमसें ५४२ वर्ष पहिले चैत्र शुदि१३ मंगलवारकी रात्रि और उत्तराफाल्गुनि नक्षत्रके प्रथम पादमें जन्म हुआथा.

प्र.१३–क्षत्रियकुंडग्राम नगर किस जगेंथा.

उ.–पूर्व देशमें सूबविहार अर्थात् बहार ति-

सके पास कुंमलपुरके निजबीक अर्थात्पा

प्र. १४–महावीर नगवंत देवानंदा
णीकी कूखमें किस वास्ते उत्पन्न हूये.

उ.–श्रीमहावीर नगवंतके जविने
चीके नवमें अपने उंच गोत्र कुलका मव
अजिमान कराथा तिस्सें नीच गोत्र बांध्य
नीच गोत्रकर्म बहुत नवोंमें नोगना पमा
मेंसें थोमासा नीच गोत्र नोगना रह गया
सके प्रजावसें देवानंदाकी कूखमें उत्पन्न
उर नीच गोत्र नोगा.

प्र. १५–तो फेर जेकर हम लोक
जात अर कुलका मद करे तो अछा फल
के नही, मद करना अछाहे के नही.

उ.–जेकर कोइजी जीव जातिका १
लको २ बलका ३ रूपका ४ तपका ५ ज्ञ

६ लाभका ७ अपनी ठकुराइका ८ ये आठ प्रकारका मद करेगा सो जीव घणे भवां तक ये पूर्वोक्त आठही वस्तु अछी नही पावेगा अर्थात् आगेही वस्तु नीच तुछ मिलेंगा इस वास्ते बुद्धिमान पुरुषकों पूर्वोक्त आठही वस्तुका मद करना अछा नहीहै.

प्र.१६–जितने मनुष्य जैनधर्म पालते होवे तिन सर्व मनुष्योंको अपने भाइ समान मानना चाहियेके नही.जेकर भाइ समान मानेतो तिनके साथ खाने पीनेकी कुछ अटचलहै के नही.

उ. जितने मनुष्य जैन धर्म पालते होवे तिन सर्वेके साथ अपने भाइ करतांभी अधिक पियार करनां चाहिये. यह कथन श्राद्धदिनकृत्य ग्रंथमें है और तिनोंकी जातीयां जेकर लोक व्यवहार अस्पृश्य न होवें तदा तिनके साथ खाने

पीनेकी जैन शास्त्रानुसार कुछ अमचल मालुम नही होतीहै क्योंकि जब श्रीमहावीरजीसें ७० वर्ष पीछे और श्रीपार्श्वनाथजीके पीछे छठे पाट श्रीरत्नप्रभसूरिजीनें जब मारवाड़के श्रीमाल नगरसें जिस नगरीका नाम अब भिल्लमाल कहतेहै तिस नगरसें किसी कारणसें भीमसेन राजेका पुत्र श्रीपुंज तिसका पुत्र उत्पलकुमर तिसका मंत्री ऊहड़ ए दोनो जणे १८ हजार कुटंब सहित निकलके योधपुर जिस जगेहै तिससें वीस कोसके लगभग उत्तरदिशिमे लाखों आदमीयोकी वस्ती रूप उपकेशपट्टन नामक नगर वसाया, तिस नगरमें सवालक्ष आदमीयांकों रत्नप्रभसूरिने श्रावकधर्ममे स्थाप्या तिस समय तिनके अगरह गोत्र स्थापन करे तिनके नाम तातहड़ गोत्र १ बापणा गोत्र २ कर्णाट गोत्र ३ बलहरा

ोत्र ४ मोराक्ष गोत्र ५ कुलहट गोत्र ६ विरहट
ोत्र ७ श्री श्रीमाल गोत्र ८ श्रेष्टि गोत्र ए सु-
चेंती गोत्र १० आइचणाग गोत्र ११ भूरि गोत्र
भटेवरा १२ भाड़ गोत्र १३ चीचट गोत्र १४ कुं-
भट गोत्र १५ डिंडु गोत्र १६ कनोज गोत्र १७
लघुश्रेष्टि १८ येह अगारही जैनी होनेसे परस्पर
पुत्र पुत्रीका विवाह करने लगे और परस्पर खाने
पीने लगे इनमेसें कितने गोत्रांवाले रजपूतथे और
कितने ब्राह्मण और वनियेभी थे इस वास्ते जेकर
जैन शास्त्रसें यह काम विरुद्ध होता तो आचार्य
महाराज श्रीरत्नप्रभसूरिजी इन सर्वकों एकठे न
करते. इसी रीतीसें पीछे पोरवाड़ उसवालादि वंश
थापन करे गये है, अन्य कोइ अरुचलतो नही है
परंतु इस कालके वैश्य लोक अपने समान किसी
दूसरी जातिवालेको नही समझते है यह अरुचल है

प्र. १७–जैन धर्म नही पालता होय तिसके साथ तो खाने पीने आदिकका व्यवहार न करे परंतु जो जैन धर्म पालता होवे तिसके साथ उक्त व्यवहार होसके के नही.

उ.–यह व्यवहार करना न करना तो वणिये लोकोंके आधीनहै. और हमारा अभिप्राय तो हम ऊपरके प्रश्नोत्तरमें लिख आएहै.

प्र. १८–जैम धर्म पालने वालोंमें अलग अलग जाति देखनेमें आतीहै ये जैन शास्त्रानु सार हैं के अन्यथाहै और ए जातियों किस वखतमे हूइहै.

उ.–जैन धर्म पालने वाली जातियों शा स्त्रानुसारे नही बनीहै, परंतु किसी गाम,नगर पुरुष धंधेके अनुसारे प्रचलित हूइ मालम पड़ती है. श्रीमाल उसवालकातो संवत् उपर लिख आ

येहै और पोरवाड वंश श्रीहरिभद्रसूरिजीने मेवाड देशमें स्थापन करा और तिनका विक्रम संवत् स्वर्गवास होनेका ५८५ का ग्रंथोमे लिखाहै और जैपुरके पास खंडेला गामहै तहां वीरात् ६४३ मे वर्षे जिनसेनआचार्यने ८२ गाम रजपूतोंके और दो गाम सोनारोके एवं सर्व गाम ८४ जैनी करे तिनके चौरासी गोत्र स्थापन करे सो सर्व खंडेलवाल बनिये जिनकों जैपुरादिक देशोंमें सरावगी कहतेहै. और संवत् विक्रम २१७ मे हंसारसें दश कोशके फासलेपर अग्रोहा नामक नगरका उज्जड टेकरा बडा भारीहै तिस अग्रोह नगरमें विक्रम संवत् २१७ के लगभग राजा अग्रके पुत्रांको और नगरवासी कितनेही हजार लोकांकों लोहाचार्यने जैनी करा, नगर उजड हूआ. पीछे राजभ्रष्ट होनेसें और व्यापार व-

णिज करनेसें अग्रवाल वनिये कहलाये. इसी त
इस कालकी जैनधर्म पालनेवाली सर्व जातिय
श्री महावीरसे ७० वर्ष पीछेसें लेके विक्रम संव
१५७५साल तक जैन जातियां आचार्योंने बनाइ
तिनसें पहिलां चारोंही वर्ण जैन धर्म पालतेथे इ
समयेकी जातियां नहीथी इस प्रश्नोत्तरमें जो लेर
मैने लिखाहै,सो वहुत ग्रंथोमें मैने ऐसा लेख व
चाहै परंतु मैने अपनी मनकल्पनासे नही लिखाहै

प्र. १९ पूर्वोक्त जातियोंमेंसें एक जाति
वाले दूसरी जातिवालोंसें अपनी जातिकों उत्त
मानतेहै और जातिगर्व करतेहै तिनकों क्य
फल होवेगा.

उ.—जो अपनी जातिकों उत्तम मानते
यह केवल अज्ञानसें रूढी चली हूइ मालम होत

एक न्याँतमें एकठे जीमणा और फेर अपने आपको ऊंचा माननां यह अज्ञानता नहीतो दूसरी क्याहै. और जातिका गर्व करनेवाले जन्मांतरमें नीच जाति पावेंगे यह फल होवेगा.

प्र.१०—सर्व जैन धर्म पालनवालीयां वैश्य जातियां एकठी मिल जायें और जात न्यात नाम निकल जावे तो इस काममें जैनशास्त्रकी कुछ मनाइहै वा नहीं

उ.—जैन शास्त्रमेंतो जिस कामके करनेसें धर्ममे दूषण लगें सो बातकी मनाइहै. शेषतो लोकोनें अपनी अपनी रूढीयां मान रखीहै उपरले प्रश्नोमें जब उसवाल बनाएथे तब अनेक जातियोकी एक जाति बनाइथी इस वास्ते अबभी कोइ सामर्थ पुरुष सर्व जातियोंको एकठो करे तो क्या विरोधहै.

प्र. २१—देवानंदा ब्राह्मणीकी कूखथी त्रिशला क्षत्रियाणीकी कूखमें श्रीमहावीरस्वामीकों किसने और किसतरेंसें हरण किना.

उ—प्रथम देवलोकके इंद्रकी आज्ञासें तिसके सेवक हरिनगमेषी देवतानें संहरण कीना तिसका कारण यहहैकि कदाचित् नीच गोत्रके प्रभावसें तीर्थंकर होने वाला जीव नीच कुलमें उत्पन्न होवे परंतु तिस कुलमें जन्म नही होताहै इस वास्तै अनादि लोक स्थितिके नियमोसें इंद्र सेवक देवतासें यह काम करवाताहै.

प्र. २२—अपनी शक्तिसें महावीरस्वामी त्रिशलाकी कूखमें क्यों न गये.

उ.—जन्म, मरण, गर्भमें उत्पन्न होनां यह सर्व कर्मके अधीनहै. निकाचित् अवश्य भोगे विना जेन दूर होवे ऐसे कर्मके उदयमे किसीकीभी

शक्ति नही चल सक्तिहै. और जो लोक ईश्वराव-तार देहधारीकों सर्वशक्तिमान् मानतेहै सो निकेवल अपने माने ईश्वरकी महत्वता जनाने वास्ते. जेकर पक्षपात छोडके विचारीये तो जो चाहेसो कर सके ऐसा कोइन्नी ब्रह्मा, शिव, हरि, क्रायस वगेरे मानुष्योमे नही हूआहै. इनोंके कर्तव्योकी इनका पुस्तकें वांचीये तब यथार्थ सर्व शक्ति विकल मालुम होजावेंगे. इस कारणसें सर्व जीव अपने करे कर्माधीनहै इस हेतुसे श्रीमहावीर-स्वामी अपनी शक्तिसें त्रिशला माताकी कूखमें नही जासकेहै.

प्र.२१—महावीरस्वामीके कितने नामथे.

उ.—वीर १ चरमतीर्थंकृत २ महावीर ३ वर्द्धमान ४ देवार्य ५ ज्ञातनंदन ६ येह नामहै १ वीर बहुत सूत्रोमें नामहै १ चरमतीर्थंकृत कल्पादि

सूत्रं १ महावीर २ वर्द्धमान यहतो प्रसिद्धहै ब-
हुत शास्त्रोंमें देवार्य, आवश्यकमें ज्ञातनंदन, ज्ञा-
तपुत्र,आचारंग दशाश्रुतस्कंधेद्द इहोंएकठे हेमा-
चार्यकृत् अभिधानचिंतामणि नाममालामेहै.

प्र. १४—श्रीमहावीरस्वामीका बड़ा भाइ
और तिनकी बहिनका क्या क्या नाम था.

उ.—श्रीमहावीरस्वामीके बड़े भाइका नाम
नंदिवर्द्धन और बहिनका नाम सुदर्शना था.

प्र. १५—श्रीमहावीरके उपर तिनके माता
पिताका अत्यंत राग था के नही.

उ.—श्रीमहावीरके उपर तिनके माता पि-
ताका अत्यंत राग था क्योंकि कल्पसूत्रमें लिखा
है कि श्रीमहावीरजीने गर्भमे ऐसा विचार क-
राके हलने चलनेसें मेरी माता दुख पावेहै. इस
वास्ते अपने शरीरकों गर्भमेही हलाना चलाना

वंध करा. तव त्रिशला माताने गर्नके न चलनेसें मनमें ऐसें मानाके मेरा गर्न चलता हलता नहीहै इस वास्ते गल गया है, तवतो त्रिशला माताने खान, पान, स्नान, राग, रंग, सव गेरूके वहुत आर्त्त ध्यान करना शुरु करा, तव सर्व राज्यनवन शोकव्याप्त हुआ. राजा सिद्धार्थनी शोकवंत हुआ. तव श्रीमहावीरजीने अवधिज्ञानसें यह वनाव देखा तव विचार कराके गर्नमे रहे मेरे ऊपर माता पिताका इतना वमा नारी स्नेहहै तो जव मे इनकी रूवरू दीक्षा लेऊंगा तो मेरे माता पिता अवश्य मेरे वियोगसें मर जाएगे, तव श्रीमहावीरजीने गर्नमेही यह निश्चय कराकि माता पिताके जीवते हुए मैं दीक्षा नही लेवुगा.

प्र. २६–इन श्रीमहावीरजीका वर्द्धमान नाम किस वास्ते रखा गया.

उ.—मनःपर्यवज्ञान निर्ग्रंथ संयमीकोंही होताहै अन्यत्र नही.

प्र. ३९—ज्ञान कितने प्रकारकेहै.

उ.—पांच प्रकारके ज्ञानहै.

प्र.४०—तिन पांचो ज्ञानके नाम क्या क्याहै.

उ.—मतिज्ञान १ श्रुतिज्ञान २ अवधिज्ञान ३ मनःपर्यवज्ञान ४ केवलज्ञान ५

प्र. ४१—इन पांचो ज्ञानोंका थोमासा स्वरूप कहो.

उ.—मतिज्ञान विनाही सुनेके जो ज्ञान होवे तथा चार प्रकारकी जो बुद्धिहै सो मतिज्ञानहै. इसके ३३६ तीनसौ छत्तीस भेदहै. जो कहने सुननेमे आवे सो श्रुतिज्ञान है; तिसके १४ चौदह भेदहै. अवधिज्ञान सर्व रूपी वस्तुकों जाने देखे; तिसके ६ भेद है. मनःपर्यवज्ञान अ-

ाइ द्वीपके अंदर सर्वके मन चिंतित अर्थको जाने
ाखे. तिसके दोय २ ज्ञेदहै. केवलज्ञान ज्ञूत, ज्ञ-
विष्यत्, वर्त्तमानकालकी वस्तु सूक्ष्म बादर रूपी
प्ररूपी व्यवध्यान रहित व्यवधान सहित दूर नेमे
प्रंदर बाहिर सर्व वस्तुको जाने, देखेहै, इस ज्ञा-
नके ज्ञेद नहीहै. इन पांचो ज्ञानोका विशेष स्व-
रूप देखना होवे तो नंदिसूत्र मलयगिरि वृत्ति
सहित वांचना वा सुन लेना

प्र. ४१—श्रीमहावीरस्वामी अनगार हो
कर जब चलने लगेथे तब तिनके ज्ञाइ राजा
नंदिवर्द्धनने जो विलाप कराथा सो श्रोमासा श्लो-
कोमें कह दिखलाओ.

उ.—त्वया विना वीर कथं व्रजामो। गृ-
हेऽधुना शून्यवनोपमाने ॥ गोष्ठीसुखं केन स-
हाचरामो। ज्ञोक्ष्यामहे केन सहाथ बंधो ॥१॥

अस्यार्थः ॥ हे वीर तेरे एकलेको गेरके हम सूने वन समान अपने घरमें तेरे विना क्युंकर जावेंगे, अर्थात् तेरे विना हमारे राजमहिलमें हमारा मन जानेको नही करताहै, तथा हे बंधव तेरे विना एकांत बेठके अपने सुख दुःखकी वार्ता करन रूप गोष्ठी किसके साथ मैं करूंगा तथा हे बंधव तेरे विना म किसके साथ बैठके भोजन जीमुंगा; क्योंके तेरे विना अन्य कोइ मेरा त्रिशलाका जाया भाइ नही है १ सर्वेषु कार्येषुच वीर वीरे ॥ त्यामंत्रणादर्शनतस्तवार्य । प्रेमप्रकर्षादभजाम हर्षं निराश्रयाश्चाथ कमाश्रयामः॥२॥ अर्थ॥ हे आर्यउत्तम सब कार्यके विषे वीरवीर ऐसे हम तेरेकों बुलातेथे और हे आर्य तेरे देखनेसे हम बहुत प्रेमसे हर्षकों प्राप्त होतेथे; अब हम निराश्रय होगयेहै, सो किसकों आश्रित

होवे, अर्थात् तेरे विना हम किसकों हे वीर हे वीर कहेंगे और देखके हर्षित होवेंगे ॥२॥ अतिप्रियं बांधव दर्शनं ते ॥ सुधांजनं भाविक दास्मदहृणोः॥ नीरागचित्तोपि कदाचिदस्मान् ॥स्मरिष्यसि प्रौढगुणाभिराम ॥३॥ अस्यार्थः ॥ हे बांधव तेरा दर्शन मेरेकों अधिक प्रियहै, सो तुमारे दर्शन रूप अमृतांजन हमारी आखोमें फेर कब पड़ेगा. हे महा गुणवान् वीर तूं निराग चित्तवाला है तोभी कदेक हम प्रिय बंधवांकों स्मरण करेंगा ३ इत्यादि विलाप करेथे.

प्र. ४३—श्रीमहावीरस्वामी दीक्षा लेके जब प्रथम विहार करनें लगेथे तिस अवसरमें शक्रइंद्रनें श्रीमहावीरजीकों क्या विनती करीथी.

उ —शक्रइंद्रने कहाकि हे भगवन् तुमारे पूर्व जन्मोंके वहुत असाता वेदनीयादि कठिन क-

र्मोके बंधनहै तिनके प्रभावसें आपकों छद्मस्थाव-स्थामें बहुत भारी उपसर्ग होवेंगे जेकर आपकी अनुमति होवे तो मैं तुमारे साथही साथ रहुं और तुमारे सर्व उपसर्ग टालुं अर्थात् दूर करुं.

प्र. ४४—तब श्रीमहावीरजीने इंद्रको क्या उत्तर दीनाथा.

उ—तब श्रीमहावीरजीने इंद्रकों ऐसें कहा के हे इंद्र यह बात कदापि अतीत कालमें नही हुइहै अबभी नहीहै और अनागत कालमे भी नही होवेगी के किसीभी देवेंद्र असुरेंद्रादिके साहाय्यसें तीर्थंकर कर्म क्षय करके केवलज्ञान उत्पन्न करतेहै; किंतु सर्व तीर्थंकर अपने २ प्राक्रमसें केवलज्ञान उत्पन्न करतेहै इस वास्ते हमभी दूसरेकी साहाय्य विना अपनेही प्राक्रमसें केवलज्ञान उत्पन्न करेंगे.

प्र. ४५—क्या श्रीमहावीरजीकी सेवामें इंद्रादि देवते रहते थे.

उ.—छद्मस्थावस्थामें तो एक सिद्धार्थनामा देवता इंद्रकी आज्ञासे मरणांत कष्ट दुर करने वास्ते सदा साथ रहता था, और इंद्रादि देवते किसि किसि अवसरमें वंदना करने सुखसाता पूछने वास्ते और उपसर्ग निवारण वास्ते आते थे और केवलज्ञान उत्पन्न हूआ पीछे तो सदाही देवते सेवामें हाजर रहतेथे.

प्र. ४६—श्रीमहावीरजीने दीक्षा लीया पीछे क्या नियम धारण कराथा.

उ.—यावत् छद्मस्थ रहुं तावत् कोइ परीषह उपसर्ग मुझको होवे ते सर्व दीनता रहित अन्य जनकी सहायसें रहित सहन करु. जिस स्थानमें रहनेसें तिस मकान वालेको अप्रीति उ-

पन्न होवे तो तहां नही रहेनां १; सदाही कायों-
सर्ग अर्थात् सदा खमा होके दोनो वाहां शरी-
रके अनलगती हुइ हैठकों लांबी करके पगोंमे
चार अगुल अतर रखके थोमारा मस्तक नीचा
नमावो एक किसी जीव रहित वस्तु ऊपर दृष्टि
लगाके खमा रहुंगा २; गृहस्थका विनय नही क-
रुंगा ३; मौन धारके रहुंगा ४; हाथमेही लेके जो-
जन करुंगा, पात्रमे नही ५ ये अभिग्रह नियम
धारण करेथे.

प्र.४७—श्रीमहावीरस्वामीजीने छद्मस्थ का-
लमे कैसे कैसे परीग्रह परीषह उपसर्ग सहन करे
थे तिनका सक्षेपसें वयान करो.

उ. प्रथम उपसर्ग गोवालीयेने करा १ शू-
लपाणिके मंदिरमें रहे तहा शूलपाणी यक्षने उ-
पसर्ग करे ते ऐसे अट्टहास करके मराया १

हाथीका रूप करके उपसर्ग करा २ सर्पके रूपसें ३ पिशाचके रूपसें ४ उपसर्ग करा. पीछे मस्तकमें १ कानमें २ नाकमें ३ नेत्रोंमें ४ दांतोमें ५ पुंछमें ६ नखमें ७ अन्य सुकुमार अंगोमें ऐसी पीडा कीनी के जेकर सामान्य पुरुष एक अंगमेभी एसी पीडा होवे तो तत्काल मरण पावे, परं भगवंत नेतो मेरुकी तरें अचल होके अदीन मनसें सहन करे, अंतमे देवता थकके श्री महावीरजीका सेवक बना शांत हूआ. चंडकौशिक सर्पने डंक मारा परं भगवंततो मरा नही, सर्प प्रतिबोध हूआ. सुदंष्ट्र नागकुमार देवताका उपसर्ग सबल कंबल देवतायोने निवारा. भगवंत तो कायोत्सर्गमें खडेथे. लोकोंने वनमे अग्नि बालि लोक तो चले गये पीछे अग्नि सूके घासादिकों बालती हूइ भगवंतके पगों हेठ आ गइ, तिस्से भगवंत

त्रिहे १९ पीछे देवांगनाका रूप करके हाव भा- वादि करके उपसर्ग दीना २० इन वीसों उपस- र्गोंसें जब भगवंत किंचित् मात्रभी नही चले तव संगमदेवताने ७ मास तक भगवंतके साथ रहके उपसर्ग करे, अंतमें थकके अपनी प्रतिज्ञासें भ्रष्ट होके चला गया. अनार्य देशमें भगवंतको बहुत परीसह उपसर्ग हुए. अंतमे दोनो कानोमें गोवा- लीयोंने कांसकी सलीयो डाली तिनसें बहुत पीडा हुइ सो मध्यम पावापुरी नगरीमे खरकवैद्य सि- द्धार्थ नामा वाणियानें कांसकी सलीयों कानो- मेंसे काढी भगवंत निरुपक्रमायुवाले थे इससें उपसर्गोंमे मरे नही, अन्य सामान्य मनुष्यकी क्या शक्तिहै, जो इतने दुख होनेसें न मरे. वि- शेष इनका देखना होवे तो आवश्यक सूत्रसें देख लेना.

प्र. ४७—श्रीमहावीरस्वामीकों उपसर्ग हो-

नेका क्या कारण था.

उ.—पूर्व जन्मांतरोमें राज्य करणेसें अत्यंत पाप करे वे सर्व इस जन्ममेंही नष्ट होने चाहिये इस वास्ते असाता वेदनीय कर्म निकाचितने अपने फल रूप उपसर्गसें कर्म भोग्य कराके दूर होगये, इस वास्ते बहुत उपसर्ग हुए

प्र. ४९—श्रीमहावीरजीने परीषहे किस वास्ते सहन करे और तप किस वास्ते करा.

उ.—जेकर भगवंत परीषहे न सहन करते और तप न करते तो पूर्वोपार्जित पाप, कर्म, क्षय न होते, तबतो केवलज्ञान और निर्वाण पद ये दोनो न प्राप्त होते इस वास्ते परीषहे उपसर्ग सहन करे, और तपभी करा.

प्र. ५०—श्रीमहावीरजीने छद्मस्थावस्थामें तप कितना करा और भोजन कितने दिन कराथा.

उ.—इसका स्वरूप नीचलेयंत्रसे समझ लेनां.

छ मासी	छ मासी तप १	चार मासी	तीन मासी	अढाइ मास तप	दो मासी तप	डेढ मास तप	मास क्षपण तप	पखवाडीयातप
तप १	पाच दिन न्यु	९	२	२	६	२	१२	७२
भद्र प्रतिमा तप	महा भद्र तप	सर्वतो भद्र तप	छठ तप	अठम तप	सर्व पारणा	दिक्षा दिन	सर्व काल तप और पारणा एकत्र करे	
दिन २	४	१०	२२९	१२	३४९	१	१२ वर्ष मास ६ दिन १५	

प्र. ५१—श्रीमहावीरजीकों दीक्षा लीये पीछे कितने व र्ष गये केवलज्ञान उत्पन्न हुआथा.

उ.—१२ वर्ष ६ मास उपर १५ पंदरा दिन इतने काल गये पीछे केवलज्ञान उत्पन्न हुआथा.

प्र. ५२—श्रीमहावीरजीकों केवलज्ञान कैसी अवस्थामें और किस जगें, उत्पन्न हुआथा.

उ.—वैशाक शुदि १० दशमीके दिन पिछले चौथे पहरमें जृंभिक गाम नगरके बाहिर ऋजु-वालुका नाम नदीके कांठे उपर वैयावृत्त नामा व्यंतर देवताके देहरेके पास श्यामाक नामा गृह-पतिके खेतमें साल वृक्षके नीचे गाय दोहनेके अवसरमें जैसें पगथलीयोंके उपर बैठतेहै तैसें उ-त्कटिका नाम आसनसे बैठे आतापना लेनेकी जगें आतपना लेते हुए, तिस दिन दूसरा उपवास छठ भक्त पाणि-रहित करा हुआथा. शुक्ल ध्यानके

दूसरे पादमे आरूढ हुआकों केवलज्ञान हुआथा.

प्र. ५३—भगवंतकों जब केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था तब तिनकी कैसी अवस्था हुइथी.

उ.—सर्वज्ञ सर्वदर्शी अरिहंत जिन केवली रूप अवस्था हुइथी.

प्र. ५४—भगवंतकी प्रथम देशनासें किसीकों लाभ हुआथा.

उ.—नही ॥ शुनने वालेतो थे, परंतु किसीकों तिस देशनासें गुण नही उत्पन्न हुआ.

प्र. ५५—प्रथम देशना खाली गइ तिस बनावकों जैन शास्त्रमें क्या नाम कहतेहै.

उ.--अछेराभूत अर्थात् आश्चर्यभूत जैन शास्त्रमें इस बनावका नाम कहाहै.

प्र. ५६——अछेरा किसकों कहतेहै.

उ.—जो वस्तु अनंते काल पीछे आश्चर्य-

कारक होवे तिसको अछेरा कहतेहै, क्योंकि को-इन्नी तीर्थंकरको देशना निष्फल नही जातीहै और श्रीमहावीरजीकी देशना निष्फल गइ, इस वास्ते इसको अछेरा कहतेहै.

प्र.५७—श्रीमहावीरजी तो केवलज्ञानसें जानते थे कि मेरी प्रथम देशनासें किसीकोंन्नी कुछ गुण नहीं होवेगा, तो फेर देशना किस वास्ते दीनी.

उ.—सर्व तीर्थंकरोंका यह अनादि नियम है कि जब केवलज्ञान उत्पन्न होवे तब अवश्यही देशना देते है तिस देशनासें अवश्यमेव जीवांकों गुण प्राप्त होताहै, परं श्रीवीरकी प्रथम देशनासें किसीको गुण न हुआ, इस वास्ते अछेरा कहाहै.

प्र. ५८—श्रीमहावीर न्नगवंतें दूसरी देशना किस जगें दीनीथी.

उ.—जिस जगें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था

तिस जगासें ४० कोसके अंदरे अपापा नामा, नगरी थी, तिससें इशान कोनमे महासेन वन नामे उद्यान था तिस वनमें श्रीमहावीरजी आए, तहां देवतादोने समवसरण रचा. तिसमें बैठके श्रीमहावीर भगवंते देशना दूसरी दीनी.

प्र. ८९—दूसरी देशना सुनने वास्ते तहां कोन कोन आये थे और तिस दूसरी देशनामें क्या बमा भारी बनाव बनाया और किस किसनें दीक्षा लीनी, और भगवंतके कितने शिष्य साधु हूए, और बमी शिष्यणी कोन हूइ.

उ.—चार प्रका के देवता और चार प्रकारकी देवी मनुष्य, मनुष्यणी इत्यादि धर्म सुननेकों आये थे.

भगवंतकी देशना सुनके बहुत नर नारी अपापा नगरीमें जाके कहने लगे आजतो हमारी

पुन्यदशा जागी जो हमने सर्वज्ञके दर्शन करे, और तिसकी देशना सुनी हमने तो ऐसी रचना-वाला सर्वज्ञ कदेइ देखा नही; यह बात नगरमे विस्तरी तिस अवसरमें तिस अपापा नगरीमें सोमल नामा ब्राह्मणनें यज्ञ करनेका प्रारंभ कर रक्का था, तिस यज्ञको करानेवाले इग्यारे ब्राह्मणोंके मुख्याचार्य बुलवाये थे, तिनके नामादि सर्व ऐसें थे. इंद्रभूति १ अग्निभूति २ वायुभूति ३ ये तीनों सगे भाई, गौतमगोत्री, इनका जन्म गाम मगधदेशमें गोर्वरगाम, इनका पिता वसुभूति, माताका नाम पृथिवी, उमर तीनोंकी गृहवासमें क्रमसे ५० । ४६ । ४२ । वर्षकी इनके विद्यार्थी ५०० पांचसौ, चतुर्दश विद्याके पारगामी चौथा अव्यक्त नाम १ भारद्वाज गोत्र २ जन्म गाम कोल्लाक सन्निवेश ३ पिताका नाम धनमि-

त्र ४ माता वारुणी नामा ५ गृहवासैं भ्रमर ५० वर्षकी ६ विद्यार्थी ५०० सौ ७ विद्या १४ का ज्ञान ८. पाचमा सुधर्म नामा १ अग्निवैश्यायन गोत्री २ जन्म गाम कोल्लाक सन्निवेश ३ पिता धम्मिल ४ भद्दिला माता ५ गृहवास ५० वर्ष ६ विद्यार्थी ५०० सौ ७ विद्या। १४। ८. छठा मंन्डिकपुत्र नाम १ वाशिष्ट गोत्र २ जन्म गाम मौर्य सन्निवेश ३ पिता धनदेव ४ माता विजयदेवा ५ गृहवास ६५ वर्ष ६ विद्यार्थी ३५० सौ ७ विद्या। १४।। ८, सातमा मौर्य पुत्र, नाम १ काश्यप गोत्र २ जन्म गाम मौर्य सन्निवेश ३ पिता मौर्य नाम ४ माता विजयदेवा ५ गृहवास ५३ वर्ष ६ विद्यार्थी ३५० सौ ७ विद्या। १४। ८. आठमा अकंपित नाम १ गौतम गोत्र २ जन्म गाम मिथिला ३ पिता नाम देव ४ माता जयंती ५ गृ-

हवास ४७ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ, विद्या १४।
। ८. नवमा अचलभ्राता नाम १ गोत्र हारीत २
जन्म गाम कोशला ३ पिता नाम वसु ४ नंदा
माता ५ गृहवास ४६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ,
विद्या १४। ८. दसमेका नाम मेतार्य १ गोत्र कौ-
डिन्य २ जन्म गाम कौशला वत्स भूमिमे ३
पिता दत्त ४ माता वरुणदेवा ५ गृहवास ३६ वर्ष
६ विद्यार्थी ३०० तीनसौ ७ विद्या १४। ८. इ-
ग्यारमा प्रभास नामा १ गोत्र कौडिन्य २ जन्म
राजगृह ३ पिता वल ४ माता अतिभद्रा ५ गृह-
वास १६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ ७ विद्या १४
८ इस स्वरूप वाले इग्यारे मुख्य ब्राह्मण यज्ञ-
वाडेमें थे तिनोके कानमें पूर्वोक्त शब्द सर्वज्ञकी
महिमाका पड्या, तब इंद्रभूति गौतम अभिमान-
में सर्वज्ञका मान भंजन करने वास्ते भगवंतके

नका धारक होताहै. तिसकों तीर्थंकर भगवंत गणधर पद देतेहै और साधुयोंके समुदायरूप गणकों धारण करता है, तिसकों गणधर कहतेहै..

प्र.६१—श्रीमहावीरजीके किनने गणधर हुएथे.

उ.—इग्यारें गणधर हुए थे, तिनके नाम उपर लिख आएहै.

प्र. ६२—संघ किसकों कहतेहै.

उ.—साधु १ साध्वी २ श्रावक ३ श्राविका ४ इन चारोंकों संघ कहतेहै.

प्र. ६३—श्रीमहावीर भगवंतके संघमें मुख्य नाम किस किसका था.

उ.—साधुयोंमे इंद्रभूति गौतम स्वामी नाम प्रसिद्ध १ साध्वीयोंमें चंपा नगरीके दधिवाहन राजाकी पुत्री साध्वी चंदनबाला २ श्रावकोंमें मुख्य श्रावस्ति नगरीके वसनेवाले संख १ शतक

२ श्राविकायोंमें सुलसा ३ रेवती ४ सुलसा राज-गृहके प्रसेनजित राजाका सारथी नाग तिसकी भार्या; और रेवती मेंढिक ग्रामकी रहनेवाली धनाढ्य गृहपत्नी थी.

प्र. ६४–श्रीमहावीरस्वामीनें किस तरेंका धर्म प्ररूप्या था.

उ.–सम्यक्तपूर्वक साधुका धर्म और श्रावकका धर्म प्ररूप्या था.

प्र. ६५—सम्यक्त पूर्वक किसकों कहतेहै

उ.–भगवंतके कथनकों जो सत्य करके श्रद्धे, तिसकों सम्यक्त कहतेहै, सो कथन यहहै लोककी अस्तिहै १ अलोकभीहै २ जीवभीहै ३ अजीवभीहै ४ कर्मका बधभीहै ५ कर्मका मोक्षभीहै ६ पुन्यभी है ७ पापभीहै ८ आश्रव कर्मका आवणाभी जीवमेंहै ९ कर्म आवनेके रोकणेका

नका धारक होताहै. तिसकों तीर्थंकर भगवंत गणधर पद देतेहै और साधुयोंके समुदायरूप गणकों धारण करता है, तिसकों गणधर कहतेहै.

प्र. ६१—श्रीमहावीरजीके किनने गणधर हुएथे.

उ.—इग्यारें गणधर हुए थे; तिनके नाम ऊपर लिख आएहै.

प्र. ६२—संघ किसकों कहतेहै.

उ.—साधु १ साध्वी २ श्रावक ३ श्राविका ४ इन चारोंकों संघ कहतेहै.

प्र. ६३—श्रीमहावीर भगवंतके संघमें मुख्य नाम किस किसका था.

उ.—साधुयोंमे इंद्रभूति गौतम स्वामी नाम प्रसिद्ध १ साध्वीयोंमें चंपा नगरीके दधिवाहन राजाकी पुत्री साध्वी चंदनबाला २ श्रावकोंमें मुख्य श्रावस्ति नगरीके वसनेवाले संख १ शतक

श्राविकायोंमें सुलसा ३ रेवती ४ सुलसा राज-
गृहके प्रसेनजित राजाका सारथी नाग तिसकी
भार्या; और रेवती मेंढिक ग्रामकी रहनेवाली
धनाढ्य गृहपत्नी थी.

प्र. ६४–श्रीमहावीरस्वामीनें किस तरेंका
धर्म प्ररूप्या था.

उ.–सम्यक्तपूर्वक साधुका धर्म और श्राव-
कका धर्म प्ररूप्या था.

प्र. ६५—सम्यक्त पूर्वक किसकों कहतेहै.

उ –भगवंतके कथनकों जो सत्य करके
श्रद्धे, तिसकों सम्यक्त कहतेहै, सो कथन यहहै.
लोककी अस्तिहै १ अलोकभीहै २ जीवभीहै ३
अजीवभीहै ४ कर्मका बंधभीहै ५ कर्मका मोक्ष-
भीहै ६ पुन्यभी है ७ पापभीहै ८ आश्रव कर्मका
आवणाभी जीवमेंहै ९ कर्म आवनेके रोकणेका

ाशय संवरज्ञीहै १० करे कर्मका वेदना जोगना-
नीहै ११ कर्मकी निर्जराज्ञीहै कर्म फल देके खि-
जातेहै १२ अरिहंतज्ञीहै १३ चक्रवर्तीभीहै १४
बलदेव वासुदेवज्ञीहै १५ नरकज्ञीहै १६ नारकी-
ज्ञीहै १७ तिर्यंचज्ञीहै १८ तिर्यंचणीज्ञीहै १९
माता पिता रुषीज्ञीहै २० देवता और देवलोक-
ज्ञीहै २१ सिद्धिस्थानज्ञी है २२ सिद्धज्ञीहै २३
परिनिर्वाणज्ञीहै २४ परिनिवृत्तज्ञीहै २५ जीवहिं-
साज्ञीहै २५ जूठज्ञीहै २६ चोरीज्ञीहै २७ मैथुन-
ज्ञीहै २८ परिग्रहज्ञीहै २९ क्रोध, मान, माया,
लोज्ञ, राग, द्वेष, कलह, अज्याख्यान, पैशुन, प-
रनिंदा, माया, मृषा, मिथ्यादर्शन, शल्य येज्ञी
सर्व है. इन पूर्वोक्त जीवहिंसासें लेके मिथ्याद-
र्शन पर्यंत अगारह पापोंके प्रतिपक्षी अगारह प्र-
कारके त्यागज्ञीहै ३० सर्व अस्तिज्ञावकों अस्ति-

रूपे और नास्तिभावकों नास्तिरूपें भगवंतने कहाहै ३१ अछे कर्मका अछा फल होताहै बुरे कर्मोका बुरा फल होताहै ३२ पुण्य पाप दोनो संसारावस्थामें जीवके साथ रहतेहै ३३ यह जो निर्ग्रंथोंके वचनहै वे अति उत्तम देवलोक और मोक्षके देने वालेहै ३४ चार काम करनेवाला जीव मरके नरक गतिमें उत्पन्न होताहै महा हिंसक, क्रूर वाणी कर्कश स्वर सोमादिने महा जीवाका वध करनेवाला १ महा परिग्रह तृष्णावाला २ मांसका खानेवाला ३ पचेंद्रिय जीवका मारनेवाला ४ ॥ चार काम करनेवाला मरके तिर्यच गतिमें उत्पन्न होताहै. माया कपटसें दूसरेके माया ठगी करे १ अपने करे कपटके ढांकने वास्ते जुठ बोले २ कमती तोल देवे अधिक तोल लेवे ३ गुणवंतके गुण देख सुनके निंदा करे ४ चार काम

करनेसें मनुष्य गतिमें उत्पन्न होताहै. अहिक स्वभाववाले १ ज्ञावें कुटलितासें रहित होवे १ स्वज्ञावेहीं विनयवंत होव २ दयावंत होवे ३ गुणवंतके गुण सुनके देखके द्वेष न करे ४॥ चार कारणसें देवगतिमें उत्पन्न होताहै; सरागी साधुपणा पालनेसें १ गृहस्थ धर्म देश विरति पालनेसें २ अज्ञान तप करनेसें ३ अकाम-निर्जरासें ४ तथा जैसी नरक तिर्यंच गतिमे जीव वेदना ज्ञोगताहै और मनुष्यपणा अनित्यहै. व्याधि, जरा, मरण वेदना करके बहुत ज्ञरा हूआहै. इस वास्ते धर्म करणेमें उद्यम करो. देवलोकमें देवतायोंको मनुष्य करतां बहुत सुखहै. अंतमें सोज्ञी अनित्यहै. जैसें जीव कर्मोंसें बधाताहै और जैसें जीव कर्मोंसें छुटके निर्वाण पदकों प्राप्त होताहै. और षटकायके जीवोंका स्वरुप ऐसाहै पीछे साधुका

धर्म और श्रावकके धर्मका यह स्वरूपहे इत्यादि धर्मदेशना श्री महावीर भगवंते सर्वजातिके मनुष्यादिकोंको कथन करीथी.

प्र. ६६—साधुके धर्मका थोमेसेमें स्वरूप कह दिखलाओ.

उ. पांच महाव्रत और रात्रि भोजनका त्याग यह ७ वस्तु धारण करे. दश प्रकारका यतिधर्म और सत्तरें भेदें संयम पालन करे, ४२ बैतालीश दोष रहित भिक्षा ग्रहण करे; दशविध चक्रवाल समाचारी पाले.

प्र. ६७ श्रावकधर्मका थोमेसेमें स्वरूप कह दिखलाओ.

उ. त्रस जीवकी हिंसाका त्याग १ बमे झुठका त्याग, अर्थात् जिसके बोलनेसे राजसें दंम होवे, और जगतमें झुठ बोलनेवाला प्रसिद्ध

होवे. ऐसे चौरीमिंभी जानना २ बमी चोरीका त्याग ३ परस्त्रीका त्याग ४ परिग्रहका प्रमाण ५ छहें दिशामें जानेका प्रमाण करे. भोग परिभोगका प्रमाण करे; बाबीस अभक्ष्य न खाने योग्य वस्तुका और बतीस अनंतकायका त्याग करे, और १५ बुरे वाणिज व्यापार करनेका त्याग करे. विना प्रयोजन पाप न करे. सामायिक करे; देशावकाशिक करे; पोषध करे; दान देवे; त्रिकाल देवपूजन करे.

प्र. ६७—साधु श्रावकका धर्म किस वास्ते मनुष्योंको करना चाहिये.

उ.—जन्म मरणादि संसार भ्रमणरूप दुखसें छूटने वास्ते साधु और श्रावकका पूर्वोक्त धर्म करना चाहिये.

प्र. ६८—श्रीभगवंत महावीरजीनें जो

धर्म कथन कराथा. सो धर्म श्रीमहावीरजीनें अपने हाथोंसे किसी पुस्तकमें लिखा था वा नही.

उ.—नही लिखाथा.

प्र. ७० श्रीमहावीर भगवंतका कथन करा हुआ सर्व उपदेश भगवंतकी रूबरु किसी दूसरे पुरुषनें लिखाथा.

उ—दूसरे किसी पुरुषनेंसर्व नही लिखाथा.

प्र. ७१—क्या लिखने लोक नही जानते थे, इस वास्तें नही लिखा वा अन्य कोइ कारण था.

उ—लिखनेतो जानते थे, परंतु वै ज्ञान लिखनेकी शक्ति किसीभी पुरुषमें नही थी, क्योंकें भगवंतने जितना ज्ञानमें देखा था तिसके अनंतमें भागका स्वरूप वचनद्वारा कहा था. जितना कथन करा था तिसके अनंतमें भाग

प्रमाण गणधरोने द्वादशांग सूत्रमें ग्रंथन करा, जेकर कोइ १२ वारमें अंग दृष्टिवादका तीसरा पूर्व नामा एक अध्ययन लिखे तो १६३८३ सोलांहजार तीन सौ त्र्याशी हथीयों जितने स्याहीके ढेर लिखनेमें लगें, तो फेर संपूर्ण द्वादशांग लिखनेकी किसमें शक्ति हो सक्तीहै, और जब तीर्थंकर गणधरादि चौदह पूर्वधारी विद्यमानथे, तिनके आगे लिखनेका कुछभी प्रयोजन नहीथा, और देशमात्र ज्ञान किसि साधु, श्रावकने प्रकरण रूप लिख लीया होवे, अपने पठन करने वास्ते, तो निषेध नही.

प्र. ७२—पूर्वोक्त जैनमतके सर्व पुस्तक श्रीमहावीरसें और विक्रम संवत्की शुरुयातसें कितने वर्ष पीछे लिखे गये है.

उ.—श्रीमहावीरजीसें ९८० नवसौ अ-

इसी वर्ष पीछे और विक्रम संवत् ५१० में लिखे गये है.

प्र ७३–इन शास्त्रोंके कंठ और लिखनेमें क्या व्यवस्था बनी थी, और यह पुस्तक किस जगे किसने किस रीतीसे कितने लिखेथे.

उ.–श्री महावीरजीसें १७० वर्षतक श्री भद्रबाहुस्वामी यावत् (द्वादशांग) चौदह पूर्व और इग्यारे अंग जैसं सुधर्मस्वामीने पाठ ग्रंथन करा था तैसाही था, परं भद्रबाहुस्वामीने बारां १२ चौमासे निरंतर नैपाल देशमें करे थे, तिस समयमें हिंदुस्थानमें बारां वर्षका काल पड़ाथा, तिसमें भिक्षा ना मिलनेसें एक भद्रबाहुस्वामी- को वर्जके सर्व साधुयोंके कंठसें सर्व शास्त्र बीच बीचसें कितनेही स्थल विस्मृत हो गये, जब बारां वरसका काल दुर हूआ, तब सर्व आचार्य

साधु पाटलिपुत्र नगरमें एकठे हुए, सर्व शास्त्र आपसमें मिलान करे तब इग्यारे अंग तो संपूर्ण हुए, परंतु चौदह पूर्व सर्व सर्वथा भूल गए, तब संघकी आज्ञासें स्थुलभद्रादि ५०० सौ तीक्ष्ण बुद्धिवाले साधु नैपाल देशमें श्री भद्रबाहुस्वामीके पास चौदह पूर्व सीखने वास्ते गये, परंतु एक स्थुलभद्रस्वामीने दो वस्तु न्यून दश पूर्व पाठार्थसें सीखे. शेष चार पूर्व केवल पाठ मात्र सीखे. श्री भद्रबाहुके पाट ऊपर श्री स्थुलभद्रस्वामी बैठे, तिनके शिष्य आर्यमहागिरि सुहस्तिसे लेके श्री वज्रस्वामी तक जो वज्रस्वामी श्री महावीरसें पीछे ५८४ में वर्ष विक्रम संवत् ११४ में स्वर्गवासी हुए है तहां तक येह आचार्य दश पूर्व और इग्यारे अंगके कंठाग्र ज्ञानवाले रहे, तिनके नाम आर्य महागिरि १ आर्यसुहस्ति २ श्री

गुणसुंदरसूरि ३ श्यामाचार्य ४ स्कंधिलाचार्य ५ रेवतीमीत्र ६ श्री धर्मसूरि ७ श्री भद्रगुप्त ८ श्री गुप्त ए वज्रस्वामी १० श्री वज्रस्वामीके समीपे तोसलिपुत्र आचार्यका शिष्य श्री आर्यरक्षितसूरिजीनें साढे नव पूर्व पाठार्थसें पठन करे. श्री आर्यरक्षितसूरि तक सर्व सूत्रोंके पाठ उपर चारोही अनुयोगकी व्याख्या अर्थात् जिस श्लोकमें चरणकरणानुयोगकी व्याख्या जिन अक्षरोंसे करतेथे तिसही श्लोकके अक्षरोंसे द्रव्यानुयोगकी व्याख्या और धर्मकथानुयोगकी और गणितानुयोगकी व्याख्या करते थे. इसतरें अर्थ करणेकी रीती श्री सुधर्मस्वामीसे लेके श्री आर्यरक्षितसूरि तक रही, तिनके मुख्य शिष्य विंध्यदुर्बलिका पुष्पादिकी बुद्धि जब चारतरेंके अर्थ समझनेमे गभराइ तब श्री आर्यरक्षितसूरिजीने मनमें वि-

चार करा के इन नव पुर्वधारीयोंकी बुद्धिमें जब चार तरेंका अर्थ याद रखना कठिन पमता है. तो अन्य जीव अल्प बुद्धिवाले चार तरेंका सर्व शास्त्रोंका अर्थ क्युं कर याद रखेंगे, इस वास्ते सर्व शास्त्रोंके पाठोंका अर्थ एकैक अनुयोगकी व्याख्या शिष्य प्रशिष्योंकों सिखाइ. शेष व्यवछेद करी सोइ व्याख्या जैन श्वेतांबर मतमे आचार्योंकी अविछिन्न परंपरायसे आज तक चलती है, तिनके पीछे स्कंधिलाचार्य श्री महावीरजीके २४ मे पाट हुए है. नंदीसूत्रकी वृत्तिमें श्री मलयगिरि आचार्य ऐसा लिखाहै कि श्री स्कंधिलाचार्यके समयमे बारां वर्ष १२ का डुर्भिक्ष काल पमा, तिसमें साधुयोंको भिक्षा न मिलनेसें नवीन पढना और पिछला स्मरण करना बिलकुल जाता रहा. और जो चमत्कारी अतिशयवंत शास्त्र थे वेभी

वहुत नष्ट हो गये. और अंगोपांगभी न्नावसें अ-
र्थात् जैसे स्वरूपवाले थे तैसे नही रहे. स्मरण
परावर्त्तनके अन्नावसें जब वारां वर्षका डुर्निक्ष
काल गया और सुनिक्ष हूआ, तब मथुरा नग-
रीमें स्कधिलाचार्य प्रमुख श्रमणसंघने एकठे
होके जो पाठ जिसना जिस साधुके जिस शा-
स्त्रका कंठ याद रहा सो सर्व एकत्र करके कालि-
क श्रुत अगादि और कितनाक पूर्वगत श्रुत किं-
चितमात्र रहा हुआ जोमके अगादि घटन करे,
इस वास्ते इसको माथुरी वाचना कहते है. कि-
तनेक आचार्य ऐसें कहतेहै १२ वर्षके कालके व-
ससें एक स्कधिलाचार्यकों वर्जके शेष सर्वाचार्य
मर गये थे. गीतार्थ अन्य कोइन्नी नही रहा था,
परं सर्व शास्त्र नूले तो नही थे; परंतु तिस का-
लमें इतनाही कंठ था, शेष अल्प बुद्धिके प्रन्ना-

वर्से पहिलांही नूल गया था, तिस स्कंदिला-चार्यके पीछे आठमें पाट और श्री वीरसें ३१ में पाट देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण हुए, तिनका वृत्तांत ऐसें जैन ग्रंथोमे लिखा है. सोरठ देशमें वेला-कूलपत्तनमें अरिदमन नामे राजा, तिसका सेव-क काश्यप गोत्रीय कामर्द्धि नाम क्षत्रिय, तिस-की नार्या कलावती, तिनका पुत्र देवर्द्धिनामे, तिसने लोहित्य नामा आचार्यके पास दीक्षा ली नी, इग्यारे अंग और पूर्वगत ज्ञान जितना अ-पने गुरुकों आताथा, तितना पढ लिया, पीछे श्री पार्श्वनाथ अर्हंतकी पट्टावलिमें प्रदेशी राजाका प्रतिबोधक श्री केशी गणधरके पट्ट परंपरायमें श्री देवगुप्तसूरिके पासों प्रथम पूर्व पठन करा, अर्थसें, दूसरे पूर्वका मूल पाठ पढते हुए श्री दे-वगुप्तसूरि काल कर गये, पीछे गुरुने अपने पट्ट

ऊपर स्थापन करा. एक गुरुने गणिपद दीना, दूसरेने क्षमाश्रमणपद दीना, तब देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण नाम प्रसिद्द हुआ. तिस समयमें जैन मतके ५०० पांचसौ आचार्य विद्यमान थे, तिन सर्वमें देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण युगप्रधान और मुख्याचार्य थे, वे एकदा समय श्री शत्रुंजय तीर्थमें वज्रस्वामीकी प्रतिष्ठा हुइ. श्री ऋषन्नदेवकी पितलमय प्रतिमाकों नमस्कार करके कपर्दि यक्षकी आराधना करते हुए; तव कपर्दि यक्ष प्रगट होके कहने लगा, हे न्नगवान्, मेरे स्मरण करनेका क्या प्रयोजन है. तव देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने कहा, एक जिनशासनका कामहै, सो यहहै कि बारें वर्षी डुकालके गये, श्री स्कंधिलाचार्यने माथुरी वाचना करीहै; तोन्नी कालके प्रन्नावसें साधुयोंकी मंद बुद्धिके होनेसें शास्त्र कं-

ठसें भूलते जातेहै. कालांतरमें सर्व भूल जावेंगे. इस वास्ते तुम साहाय्य करो. जिस्सें मै ताम्र-पत्रों उपर सर्व पुस्तकोंका लेख करुं; जिससें जैन शास्त्रकी रक्षा होवे. जो मंदबुद्धिवालाज्ञी होवेगा सोंज्ञी पत्रों उपरि शास्त्राध्ययन कर सकेगा, तब देवतानें कहा मैं सानिध्य करुंगा, परंतु सर्व साधुयोंकों एकठे करो और स्याही ताम्रपत्र बहुत संचित करो, लिखारियोंको बुलाउ; और साधारण द्रव्य श्रावकोंसें एकठा करावो; तब श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणनें पूर्वोक्त सर्व काम वल्लभी नगरीमें करा, तब पांचसौ आचार्य और वृद्ध गीतार्थोंनें सर्वांगोपांगादिकोंके आलापक साधु लेखकोंनें लिखे, खरडा रुपमें; पीछे देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने सर्व अंगोपागोके आलापक जोडके पुस्तकरूप करे परस्पर सूत्रांको जुलावना

जैसें ज्ञगवतीमे जहा पन्नवणाए इत्यादि अति देशकरे सर्व शास्त्र शुद्ध करके लिखवाए देवताकी सांनिध्यतासें एक वर्षमें एक कोटी पुस्तक १००००००० लिखे आचारंगका महाप्रज्ञा अध्ययन किसी कारणसें न लिखा, परं देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजी प्रमुख कोइज्ञी आचार्यने अपनीमनकल्पनासें कुछज्ञी नही लेखादि इस वास्ते जैन शास्त्र सर्व सत्य कर मानने चाहिये ॥ जो कोइ कोइ कथन समझमें नही आताहै, सो यथार्थ गुरु गम्यके अज्ञावसें, परं गणधरोंके कथनमें किंचित् मात्रज्ञी ज्ञूल नहीहै. और जो कुछ किसी आचार्यके ज्ञूल जानेसें अन्यथा लिखाज्ञी गया होवै तो ज्ञी अतिशय ज्ञानी विना कोन सुधार सके, इस वास्ते तदमेव सच्चं जं जिणेहिं पन्नत्तं, इस पाठके अनुयायी रहना चाहिये.

ठसें भूलते जातेहै. कालांतरमें सर्व भूल जावेंगे. इस वास्ते तुम साहाय्य करो. जिस्सें मै ताम्र-पत्रों उपर सर्व पुस्तकोंका लेख करुं; जिससें जैन शास्त्रकी रक्षा होवे. जो मंदबुद्धिवालाजी होवेगा सोजी पत्रों उपरि शास्त्राध्ययन कर सकेगा, तव देवतानें कहा में सानिध्य करुंगा, परंतु सर्व साधुयोंको एकठे करो और स्याही ताम्रपत्र वहुत संचित करो, लिखारियोंको बुलाउ; और साधारण द्रव्य श्रावकोंमें एकठा करावो, तव श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणनें पूर्वोक्त सर्व काम वल्लभी नगरीमें करा, तव पांचसौ आचार्य और वृद्ध गीतार्थोनें सर्वांगोपांगादिकांके-आलापक साधु लेखकोंनें लिखे, खरडा रुपमें; पीछे देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने सर्व अंगोपांगोके आलापक जोडके पुस्तकरूप करे. परस्पर सूत्रांको जुलावना

सें जगवतीमे जहा पन्नवणाए इत्यादि अति
शंकरे सर्व शास्त्र शुद्धकरके लिखवाए. देवताकी
ानिध्यतासें एक वर्षमें एक कोटी पुस्तक
0000000 लिखे आचारंगका महाप्रज्ञा अध्य-
ान किसी कारणसें न लिखा, परं देवर्द्धिगणि क्ष
ाश्रमणजी प्रमुख कोइजी आचार्यने अपनीमन-
कल्पनासें कुछजी नही लेखाहै इस वास्ते जैन
शास्त्र सर्व सत्य कर मानने चाहिये ॥ जो कोइ
कोइ कथन समझमें नही आताहै, सो यथार्थ गुरु
गम्यके अजावसें, परं गणधरोंके कथनमें किंचित्
मात्रजी जूल नहीहै. और जो कुछ किसी आचा-
र्यके जूले जानेसें अन्यथा लिखाजी गया होवै तो
जी अतिशय ज्ञानी विना कोन सुधार सके, इस
वास्ते तदमेव सच्चं जं जिणेहिं पन्नत्तं, इस पाठके
अनुयायी रहना चाहिये.

प्र. ७४–जैन मतमै जिसकों सिद्धांत तथा आगम कहते है, वै कौनसे कौनसे है. और तिनके मूल पाठ १ निर्युक्ति २ भाष्य ३ चूर्णि ४ टीका ५ के कितने कितने ३२ बत्तीस अक्षर प्रमाण श्लोक संख्याहै, यह संक्षेपसें कहो.

उ.–इस कालमें किसी रूढिके सबबसें ४५ पैंतालीस आगम कहे जातेहै, तिनके नाम और पंचांगीके श्लोक प्रमाण आगे लिखे हुए, यंत्रसें जान लेने. और इनमें विषय विधेय इस तरेका है. आचारंगमें मूल जैन मतका स्वरूप, और साधुका आचारका कथन है.१ सूयगडांगमे तीनसौ ३६३ त्रेसठ मतका स्वरूप कथनादि विचित्र प्रकारका कथन है.२ ठाणांगमें एकसें लेके दश पर्यंत जे जे वस्तुयो जगतमें है तिनका कथन है. ३ समवायांगमें एकसें लेके कोटाकोटि

पर्यंत जे पदार्थ है तिनका कथन है ४ नगवतीमें गौतमस्वामीके करे हुए विचित्र प्रकारके ३६००० बत्तीस हजार प्रश्नोके उत्तर है. ५ ज्ञातामें धर्मी पुरुषोंकी कथा है. ६ उपाशक दशामें श्री महावीरके आनंदादि दश श्रावकोंके स्वरूपका कथन है. ७ अंतगम्में मोक्ष गये ए० नव्वे जीवांका कथन है ८ अणुत्तरोववाइमें जे साधु पांच अनुत्तर विमानमे उत्पन्न हुएहे, तिनका कथन है.ए प्रश्नव्याकरणमें हिंसा १ मृषावाद २ चौरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ इन पांचो पापांका कथन और अहिंसा १, सत्य २, अचौरी ३, ब्रह्मचर्य ४ परिग्रह त्याग ५ इन पांचो संवरोका स्वरूप कथन कराहे. १० विपाक सूत्रमें दश दुख विपाकी और दश सुख विपाकी जीवांके स्वरूपका कथन है. ११ इति संक्षेपसें अंगाभिधेय उववाइमें १२

माका कथनहै, यह संक्षेपसें पैंतालीस आगममें जो कुछ कथन करा है, तिसका स्वरूप कहा, परंतु यह नही समझ लेनाके जैन मतमें इतनेही शास्त्र प्रमाणिक है, अन्य नही; क्योंकि उमास्वाति आचार्यके रचे हुए, ५०० प्रकरण है, और श्री महावीर भगवंतका शिष्य श्री धर्मदास गणि क्षमाश्रमणजीकी रची हुइ उपदेशमाला तथा श्री हरिभद्रसूरिजीके रचे १४४४ चौदहसौ चौवालीस शास्त्र इत्यादि प्रमाणिक पूर्वधरादि आचार्यों के प्रकृति शतकादि हजारोंही शास्त्र विद्यमान है, वे सर्व प्रमाणिक आगम तुल्य है, राजा शिवप्रसादजीनें अपने बनाए इतिहास तिमर नासकमें लिखा है. बुलरसाहिबन १५०००० डेढ लाख जैन मतके पुस्तकोंका पता लगाया है. और यहभी मनमें कुविकल्प न करनाके

शास्त्र गणधरोंके कथन करे हुए है, इस वास्ते सच्चे है, अन्य सच्चे नही, क्योंके सुधर्मस्वामीने जेसे अंग रचेथे वैसेतो नही रहेहै. संप्रति कालके अंगादि सर्व शास्त्र स्कंधिलादि आचार्योंने वांचनारूप सिद्धांत बांधेहै, इस वास्ते पूर्वोक्त आग्रह न करना, सर्व प्रमाणिक आचार्योंके रचे प्रकरण सत्य करके मानने, यही कल्याणका हेतु है.

क्र.	सूत्र नामानि.	सूत्र मूल संख्या.	निर्युक्तिः	भाष्यं	चूर्णि	टीका	सर्व संख्या.
	अथांगानि.						
	आचाराग सूत्रं	२५००	४५०	०	८३००	१२०००	२३२५०
	सूयगडांग सूत्रं	२१००	२५०	०	१००००	१२८५०	२५२००
	ठाणंग सूत्रं.	३७७५	०	०	०	१५२५०	१९०२५
	समवायांग सूत्रं	११६७	०	०	४००	३७७६	५८४३
	भगवती सूत्रं.	१५७५२	०	०	४०००	१८६१६	३८३६८
	ज्ञाता धर्मकथा सूत्रं.	६०००	०	०	०	४२५२	१०२५२

७	उपाशकदशांग सूत्र.	८१२	०	०	०	१३००	३००४
८	अतगड सूत्रं.	७१०	०	०	०		
९	अनुत्तरोववाइ सूत्र	१९२	०	०	०		
१०	प्रश्नव्याकरण सूत्र	१२५०	०	०	०	४६००	५८५०
११	विपाक श्रुताग सूत्रं	१२१६	०	०	०	९००	२११६

अथोपांगानि.

१ १२	उववाइ सूत्रं.	११६७	०	०	०	३१२५	४२९२
२ १३	राजप्रश्नीय सूत्रं.	२०७८	०	०	०	६०००	८०७८

	विशेषावश्यकं	५०००	०	०	०	लघु १४००० वृहत् २८०००	४७०००
	पाक्षिक सूत्रं	३००	०	०	४००	२७००	३४००
	उघनिर्युक्तिः	११७०	०	३०००	७००	७०००	११८७०
२ २५	दशवैकालिकं सूत्र	७००	४५०	०	७०००	लघु २७०० वृहत् ६८१०	१७६६०
३ २६	पिंढनिर्युक्तिः	७००	०	०	०	लघु ४००० वृहत् ७०००	११७००

४ २७	उत्तराध्ययन सूत्र.	२०००	५००	०	६०००	लघु १२००० वृहत् १७६४५	२८१४५

अथ छेद सूत्राणि.

१ २८	दशाश्रुत स्कंध सूत्र.	१८३०	१६८	०	२२२५	०	४२२३
२ २९	बृहत्कल्प सूत्रं	४७३	०	लघु ८००० वृहत् १२०००	१४००० विशेष ११०००	४२०००	८७४७३
३ ३०	व्यवहार सूत्र.	६०००	०	६१००	१०३६१	३३६२५	५०१८६
४ ३१	पञ्चकल्प सूत्र	११३३	०	३१२५०	३११३०	०	७३८८

	विशेषावश्यकं	५०००	०	०	०	लघु १४००० बृहत् २८०००	४७०००
	पाक्षिक सूत्र	३००	०	०	४००	२७००	३४००
	उघनिर्युक्तिः	११७०	०	३०००	७००	७०००	११८७०
२ २५	दशवैकालिकं सूत्र	७००	४५०	०	७०००	लघु २७०० बृहत् ६८१०	१७६६०
३ २६	पिंडनिर्युक्तिः	७००	०	०	०	लघु ४००० बृहत् ७०००	११७००

४ २७	उत्तराध्ययन सूत्र.	२०००	५००	०	६०००	लघु १२००० वृहत् १७६४५	३८१४५

अथ छेद सूत्राणि.

१ २८	दशाश्रुत स्कंध सूत्र.	१८३०	१६८	०	२२२५	०	४२२३
२ २९	वृहत्कल्प सूत्रं	४७३	०	लघु ८००० वृहत् १२०००	१४००० विशेष ११०००	४२०००	८७४७३
३ ३०	व्यवहार सूत्र.	६०००	०	६०००	१०३६१	३३६२५	५०१८६
४ ३१	पंचकल्प सूत्र.	११३३	०	३१२५०	३१३०	०	७३८८

	जीतकल्प सूत्रं	२०५	०	३१२४	१००० विशेपचूर्णि ११०००	७०००	२२३२९
५ ३२	निशिथ सूत्रं	८१५	०	लघु ७४०० वृहत् १२०००	२८०००	०	४८२१५
६ ३३	महानिशिथ	लघुवाचना ३५००		मध्यम वाचना ४२००		वृहद्वाचना ४५००	१२२००

पइन्ना सूत्राणि.

१ ३४	चतुःशरण सूत्रं	६४	०	०	०	०	६४
२ ३५	आतुरमत्या ख्यानं सत्रं.	८४	०	०	०	०	८४

३ ३६	भक्तपरिज्ञा सूत्र,	१७१	०	०	०	०	१७१
४ ३७	महाप्रत्याख्यान सूत्र.	१३४	०	०	०	०	१३४
५ ३८	तदुलवैयालीय सूत्र	४००	०	०	०	०	४००
६ ३९	चद्रवेध्यक सूत्र.	१७६	०	०	०	०	१७६
७ ४०	गणिविद्या सूत्र.	१००	०	०	०	०	१००
८ ४१	मरणसमाधि सूत्र.	६५६	०	०	०	०	६५६
९ ४२	देवेंद्र स्तव सूत्र वीर स्तव सूत्र	२००	०	०	०	०	२००

१० ४३	गच्छाचार सूत्र.	१३८	०	०	०	०	१३८
	संस्तारक सूत्र	१२२	०	०	०	०	१२२
	चूलिका सूत्रं	ऋषिभाषित सूत्रं. ७००	ज्याति-ष्क करंड सूत्र १८९०	सिद्धप्राभृत सूत्र १३३५	वसुदेव-हिंडि प्रथम खंड ११०००	मध्यमखंड १९००० द्वीपसागर पन्नति २५००	तीर्थोद्धार सूत्र १५०० अंगविद्या ९००० ये भी ४५ के अंतर भूतही है
१ ४४	नंदि सूत्र	७००	०	०	२००१	लघु २३१२ बृहत् ७७३५	१२७४८
२ ४५	अनुयोगद्वार सूत्रं	१८९९	०	०	३०००	लघु ३५०० बृहत् ६५००	१४८९९

प्र. ७५—श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणसें पहिलां जैन मतका कोइ पुस्तक लिखा हुआ थाके नही.

उ.—अंगोपांगादि शास्त्रतो लिखे हुए नही मालुम होतेहै. परंतु कितनेक अतिशय अद्भुत चमत्कारी विद्याके पुस्तक और कितनीक आम्नायके पुस्तक लिखे हुए मालुम होतेहै, क्योंकि विक्रमादित्यके समयमें श्री सिद्धसेन दिवाकर नामा जैनाचार्य हुआहै, तिनौंनें चित्रकुटके किल्लेमें एक जैन मंदिरमें एक चमत्कारी एक पथरका बीचमे पोलाडवाला स्तंभ देखा, तिसमे श्री सिद्धसेनसें पहिले होगए कितनेक पूर्वधर आचार्योने विद्यायोंके कितनेक पुस्तक स्थापन करेथे, तिस स्तंभका ढांकणा ऐसा किसी जयवीक लेपसे बंद करा था कि सर्व स्तंभ एक सरीखा मालुम पडताथा;

प्र. ७५—श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणसें पहिलां जैन मतका कोइ पुस्तक लिखा हुआ थाके नही.

उ.—अंगोपांगादि शास्त्रतो लिखे हुए नही मालुम होतेहै. परंतु कितनेक अतिशय अद्भुत चमत्कारी विद्याके पुस्तक और कितनीक आम्नायके पुस्तक लिखे हुए मालुम होतेहै, क्योंकि विक्रमादित्यके समयमें श्री सिद्धसेन दिवाकर नामा जैनाचार्य हुआहै, तिनौनें चित्रकुटके किल्लेमें एक जैन मंदिरमे एक बडा भारी एक पथरका बीचमे पोलारवाला स्तंभ देखा, तिसमे श्री सिद्धसेनसें पहिले होगए कितनेक पूर्वधर आचार्योंने विद्याओंके कितनेक पुस्तक स्थापन करेथे, तिस स्तंभका ढांकणा ऐसा किसी औषधीक लेपसे बंद करा था कि सर्व स्तंभ एक सरीखा मालुम पडताथा;

१० ४३	गच्छाचार सूत्र.	१३८	०	०	०	०	१३८
	सस्तारक सूत्र	१२२	०	०	०	०	१२२
	चूलिका सूत्र	ऋषिभाषित सूत्रं. ७००	ज्योतिष्क करंड सूत्र १८५०	सिद्धप्राभृत सूत्र १३३५	वसुदेवहिंडि प्रथम खंड ११०००	मध्यमखंड १९००० द्वीपसागर पन्नति २५००	तीर्थोद्धार सूत्र १५०० अगवि द्या ९००० ये भी ४५ के अतर भूतही है
१ ४४	नंदि सूत्र	७००	०	०	२००१	लघु २३१२ बृहत् ७७३५	१२७४८
२ ४५	अनुयोगद्वार सूत्रं	१८९९	०	०	३०००	लघु ३५०० बृहत् ६५००	१४८९९

. त्यादि अन्यभी कितनेक राजे श्री महावीरके भक्त थे, येह सर्व राजायोंके नाम अंगोपांग शास्त्रोंमे लिखे हुएहै.

प्र. ७७—जो जो नाम तुमने महावीर भगवंतके भक्त राजायोंके लिखे है, बौधमतके शास्त्रोमें तिनही सर्व राजायोंकों बौद्धमति लिखाहै, तिसका क्या कारणहै

उ.—जितने राजे श्रीमहावीर भगवंतके भक्त थे, तिन सर्वकों बौधशास्त्रोंमें बौधभति अर्थात् बुधके भक्तयहि लिखेहै, परंतु कितनेक राजायोंका नाम लिखाहै, तिसका कारणतो ऐसा मालुम होताहैकि पहिलें तिन राजाओंने बुधका उपदेश सुनके बुधके मतकों माना होवेगा, पीछे

° श्रमणका उपदेश सुनके जैनधर्ममें

होतेहै, क्योंकि श्रीमहावीर भग-

लासपुरका विजयनामा राजा २२ अमलकल्पा नगरीका स्वेतनामा राजा २३ वीतभय पट्टनका उदायन राजा २४, कौशांबीका उदायन वत्स-राजा, २५ क्षत्रियकुंड ग्राम नगरका नंदिवर्धन राजा, २६ उज्जयनका चंदप्रद्योत राजा, २७ हि-मालय पर्वतके उत्तर तर्फ पृष्टचंपाके शाल महा-शाल दो भाइ राजे २८ पोतनपुरका प्रसन्नचंद राजा, २९ हस्तिशीर्ष नगरका अदिनशत्रु राजा, ३० रुषभपुरका धनावह नामा राजा, ३१ वीर-पुर नगरका वीरकृष्ण मित्र नामा राजा, ३२ वि-जयपुरका वासवदत्त राजा, ३३ सोगंधिक नग-रीका अप्रतिहत नामा राजा, ३४ कनकपुरका प्रियचंद राजा ३५ महापुरका बलनामा राजा, ३६ सुघोस नगरका अर्जुन राजा, ३७ चंपाका दत्त राजा, ३८ साकेतपुरका मित्रनंदी राजा ३९ इ-

काश्यप गोत्री सिद्धार्थ राजादि श्रावक थे, और त्रिसलादि श्राविकायो थी. बुधधर्मके पुस्तकमें विशालि नगरीके राजाकों बुध के समयमें पार्श्व धर्मके मानने वाला अर्थात् जैनधर्मके मानने वाला लिखाहै, और बुधधर्मके पुस्तकमें ऐसाभी लिखाहैकि एक जैनधर्मी बडे पुरुषकों बुधने अपने उपदेशसें बौद्ध धर्मी करा, इस वास्ते श्रीमहावीरसे पहिला जैनधर्म भरतखंडमें श्रीपार्श्वनाथके शासनसें चलता था.

प्र. ७९—श्रीमहावीरजीसें पहिले तेवीसमें तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथजी हुए है. इस कथनमें क्या प्रमाण है.

उ.—श्रीपार्श्वनाथजीसें लेके आज पर्यंत श्री पार्श्वनाथकी पट्ट परंपरायमें ८३ तैरासी आचार्य हुए है. तिनमेंसें सर्वसें पिछला ..

मेंसे कालिक पुत्र १ मैथिला २ आनंदरक्षित ३ काश्यप ४ ये नामके चार स्थिविर पांचसौ साधुयोंके साथ तुंगिका नगरीमें आये तिस समयमें श्री महावीर भगवंत इंद्रभूति गौतमादि साधुयोंके साथ राजगृह नगरमें विराजमान थे, तथा साकेतपुरका चंद्रपाल राजा तिसकी कनकसवेश्या नामा राणी तिनका पुत्र कलासवैषिक नामे तिसने श्री पार्श्वनाथके संतानीये श्रीस्वयंप्रभाचार्यके शिष्य वैकुंठाचार्यके पास दीक्षा लीनी. पीछे राजगृहनगरमें श्रीमहावीरके स्थविरोसें चर्चा करके श्री महावीरका शासन अंगीकार करा. इसी तरे पार्श्वसंतानीये गंगेय मुनि तथा उदकपेढाल पुत्र मुनिने श्रीमहावीरका शासन अंगीकार करा. इन पुर्वोक्त आचार्योंके समयमें वैशालि नगरीका राजा चेटकादि और क्षत्रियकुंडनगरके ज्ञातवंशी

विद्यमान है, तथा अयरणपुरकी छावनीसें ६ कोसके लगन्नग कोरंटनामा नगर उजम्म पमा है, जिस जगो कोरटा नामें आजके कालमें गाम वसता है तहांन्नी श्रीमहावीरजीकी प्रतिमा मंदिरकी श्रीरत्नप्रन्न सूरिजीकी प्रतिष्टा करी हुइ अब विद्यमान कालमें सो मंदिर खमाहै, तथा उसवाल और श्रीमालि जो वणिये लोकोमें श्रावक ज्ञाति प्रसिद्द है, वेन्नी प्रथम श्रीरत्नप्रन्न सूरिजीनेंही स्थापन करीहै, तथा श्रीपार्श्वनाथजीसें १७, सत्तरमें पट्ट ऊपर श्री यक्षदेव सूरि हुए है, वीरात् ५८५ वर्षे जिनोंनें बारा वर्षीय कालमें वज्रस्वामीके शिष्य वज्रसेनके परलोक हुए पीछे तिनके चार मुख्य शिष्य जिनकों वज्रसेनजीने सोपारक पट्टणमें दीक्षा दीनी थी, तिनके नामसे चार शाखा तथा कुल स्थापन करे. वे येहे; ना-

आचार्य सांप्रति कालमें मारवाममें विचरेहै इ-समने अपनी आंखोसें देखाहै, जिसकी पट्टावलि आज पर्यंत विद्यमान है, तिस पार्श्वनाथजीके होनेमे यही प्रत्यक्ष और अनुमान प्रमाण बलवंतहै.

प्र. ८०–कौन जाने किसी धूर्त्तनें अपनी कल्पनासें श्रीपार्श्वनाथ और तिनकी पट्ट परंपराय लिख दीनी होवेगी, इससे हमकों क्योंकर श्री पार्श्वनाथ हुए निश्चित होवें ?

उ.–जिन जिन आचार्योंके नाम श्रीपार्श्वनाथजीसें लेके आज तक लिखे हुए है, तिनोमेंसें कितनेक आचार्योंने जो जो काम करेहै वे प्रत्यक्ष देखनेमें आते है जैसें श्री पार्श्वनाथजीसें छठे पट्ट ऊपर श्री रत्नप्रभ सूरिजीने वीरात् ७० वर्ष पीछे उपकेश पदमें श्री महावीर स्वामीकी प्रतिष्ठा करी सो मंदिर और प्रतिमा आज तक

विक्रमात् १०७२ वर्षे नवपद प्रकरणके करता हुए है, सोभी ग्रंथ विद्यमानहै; तथा श्रीमहावीरजीकी परंपराय वाले आचार्योंने अपने बनाए कितनेक ग्रंथोमें प्रगट लिखाहैकि, जो उपकेश गछहै सो पट्ट परंपरायसें श्रीपार्श्वनाथ २३ तेवीसमें तीर्थंकरसें अविछिन्न चला आताहै; जब जिन आचार्योंकी प्रतिमा मंदिरकी प्रतिष्टा करी हुइ और ग्रंथ रचे हुए विद्यमान है तो फेर तिनके होनेमें जो पुरुष शंसय करताहै तिसकों अपने पिता, पितामह, प्रपितामह आदिकी वंशपरंपरायमेंभी शंसय करनां चाहिये, जैसे क्या जाने मेरी सातमी पेढीका पुरुष आगे हुआहैके नही. इस तरेंका जो शंसय कोइ विवेक विकल करे तिसकों सर्व बुद्धिमान् उन्मत्त कहेगे. इसी तरे श्रीपार्श्वनाथकी पट्ट परंपरायके विद्यमान जो पुरुष श्री

गेंद्र १, चंद्र २, निवृत्त ३, विद्याधर ४, यह चारों कुल जैन मतमें प्रसिद्धहै; तिनमेंसें नागेंद्र कुलमें उदयप्रभ मल्लिषेणसूरि प्रमुख और चंद्रकुलमें वड गछ, तप गछ, खरतर गछ, पूर्णवल्लीय गछ, देवचंद्रसूरि कुमारपालका प्रतिबोधक श्रीहेमचंद्रसूरि प्रमुख आचार्य हुए है. तथा निवृत्तकुलमें श्री शीलांकाचार्य श्रीद्रोणसूरि प्रमुख आचार्य हुएहै. तथा विद्याधरकुलमें १४४४ ग्रंथका कर्त्ता श्रीहरिभद्रसूरि प्रमुखाचार्य हुए है, तथा मैं इसग्रंथका लिखनेवाला चंद्रकुलमें हुं; तथा पैंतीसमें पट्ट उपर श्रीदेवगुप्तसूरिजी हुए है. जिनोंके समीपे श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने पूर्व २ दो पढे थे, तथा श्री पार्श्वनाथजीके ४३ मे पट्ट ऊपर श्री कक्कसूरि पंच प्रमाण ग्रंथके कर्त्ता हुएहै, सो ग्रंथ विद्यमानहै तथा ४४ मे पट्ट ऊपर श्रीदेवगुप्तसूरिजी

वीरके शिष्यबनें और एक वार्त्ता नवीन जोमके जैनमत नामे मत खमा करा, इस कथनकों आप सत्य मानते होके नहीं ?

ऊ.—इस कथनकों हम सत्य नहीं मानते है; क्यों कि प्रोफेसर जेकोबीने आचारंग और कल्पसूत्रके अपने करे हुए इंग्लीश ज्ञाषांतरकी ज्ञपयोगी प्रस्तावनामें प्रोफेसर ए. वेबर और मी० ए. वाथ्रकी पूर्वोक्त कल्पनाकों जूठी दिखाइहै; और प्रोफेसर जेकोबीने यह सिद्धांत अंतमे ज्ञताया है कि जैनमतके प्रतिपक्षीयोंनें जैन मतके सिद्धांत शास्त्रों ऊपर ज्ञरोंसा रखना चाहिये, कि इनमें जो कथनहै सो मानने लायकहै. विशेष देखनां होवेतो मा्क्तर बूलरसाहिब कृत जैन दंत कथाकी सत्यता वास्ते एक पुस्तकका अतर हिस्सा ज्ञागहै, सो देख लेनां हमबी अपनी बुद्धिके

पार्श्वनाथ २३ तेवीसमें तीर्थंकरके होनेमे नही करे अथवा शंसय करे तिसकोंभी प्रेक्षावंत पुरुष उन्मत्तोंही पंक्तिमे समझते है, तथा धूर्त्त पुरुष जो काम करताहै सो अपने किसी संसारिक सुखके वास्ते करता है. परंतु सर्व संसारिक इंद्रिय जन्य सुखसे रहित केवल महा कष्ट रूप परंपराय नही चला सक्ताहै, इस वास्ते जैनधर्मका संप्रदाय धूर्त्तका चलया हुआ नही, किंतु अष्टादश दूषण रहित अर्हतका चलाया हुआहै.

प्र. ७१ कितनेक यूरोपीअन पंम्ति प्रोफेसर ए. वेवर साहिबादि मनमे ऐसी कल्पना करतेहै कि जैन मतकी रीती बुध धर्मके पुस्तकोंके अनुसारे खमी करीहै, प्रोफेसर वेवर ऐसेंभी मानतेहै कि, वौध धर्मके कितने साधु बुधकों नाकबूल करके बुधके एक प्रतिपक्षीके अर्थात् महा-

लेख कैसें लिखा जावे, वलके जैन पुस्तकोंमेंतो बुधकी वावत वहुत लेखहै. श्रीआचारंगकीटीकामें ऐसा लेखहै. मौद्गलिस्वातिपुत्राभ्यां शौद्धोदनिं ध्वजीकृत्य प्रकाशितः अस्यार्थ ॥ मौद्गलिपुत्र अर्थात् मौद्गलायन और स्वातिपुत्र अर्थात् सारीपुत्र दोनोंने शुद्धोदनके पुत्रकों ध्वजीकृत्य अर्थात् ध्वजाकी तरें सर्व मताध्यक्षोंसें अधिक ऊंचा सर्वोत्तम रूप करकें प्रकाश्याहै. आचारंगके लेख लिखनेवालेका यह अभिप्रायहै कि शुद्धोदनका पुत्र सर्वज्ञ अतिशयमान् पुरुष नही था, परंतु इन दोनों शिष्योंनें अपनी कल्पनासे सर्वसें उत्तम प्रकाशित करा, इस वास्ते वौद्धमत स्वरुचिसें वनायाहै; तथा श्री आचारंगजीकी टीकामें एक लेख ऐसाभी लिखा है, तच्चनिकोपासकोंनेदवलात्, बुद्धोत्पत्ति कथानकात् द्वेषमुपगच्छेत् अर्थ बुधका उपासक आ-

अनुसारे इस प्रश्नका उत्तर लिखते है. हम उपर जैनमतकी व्यवस्था श्रीपार्श्वनाथजीसें लेके आज तक लिख आएहै, तिससें प्रोफेसर ए. वेबरका पूर्वोक्त अनुमान सत्य नही सिद्ध होताहै. जेकर कदाचित् बौध मतके मूल पिटग ग्रंथोमें ऐसा लेख लिखा हुआ होवेकि, बुधके कितनेक शिष्य बुधकों नाकबूल करके बुधके प्रतिपक्षी निर्ग्रंथोके सिरदार न्यात पुत्रके शिष्य बने; तिनोंने बुधके समान नवीन कल्पना करके जैनमत चलायाहै. जेकर ऐसा लेख होवे तबतो हमकोबी जैनमतकी सत्यता विषे संशय उत्पन्न होवे, तबतो हमभी प्रोफेसर ए वेबरके अनुमानकी तर्फ ध्यान देवें; परंतु ऐसा लेख जुग बुधके पुस्तकोंमे नही है क्योंकि बुधके समयमे श्रीपार्श्वनाथजीके हजारों साधु विद्यमानथे तिनके होते हुए ऐसा पुर्वोक्त

उ.—स्वेतांबरमतके पुस्तकोंमेंतो जितना बुधकी बावत कथन हमने श्री आचारंगजीकी टीकामें देखा वांचाहै तितनातो हमने ऊपरके प्रश्नमें लिख दीयाहै, परंतु जैनमतकी दुसरी शाखा जो दिगंबरमतकीहै तिसमे एक देवसेनाचार्यने अपने रचे हूए दर्शनसार नामक ग्रंथमे बुधकी उत्पत्ति इस रीतीसें लिखीहै. गाथा ॥ सिरि पासणाह तित्थे ॥ सरऊ तीरे पलासणयर त्थे॥ पिहि आसवस्स सीहे ॥ महा लुदो बुद्दकित्ति मुणी ॥१॥ तिमिपूरणासणेया ॥ अहिगयपवज्जावऊपरमठ्ठे ॥ रत्तवरंधरित्ता ॥ पवठ्ठियतेणएयत्तं ॥२॥ मंसस्सनत्थिजीवो जहाफलेदहियदुध्दसक्कराए ॥ तम्हातंमुणित्ता भरकंतोणत्थिपाविठ्ठो॥३॥ मज्जंणवज्जणिज्जं ॥ दव्वदवंऊहजलतहएदं ॥ इति लोएघोसिता पवत्तियंसंघसावज्जं ॥४॥ अणोकरे

नंद तिसकी बुद्धिके बलसें बुधकी उत्पत्ति हूईहै, जेकर यह कथा सत्यसत्य पर्षदामें कथन करीये तो बौद्धमतके मानने वालोंकों सुनके द्वेष उत्पन्न होवे, इस वास्ते जिस कथाके सुननेसें श्रोताकों द्वेष उत्पन्न होवे तैसी कथा जैनमुनि परिषदामें न कथन करे, इस लेखसें यह आशय हैकि बुधकी उत्पतिरूप सच्ची कथा बुधकी सर्वज्ञता और अति उत्तमता और सत्यता और तिसकी कल्पित कथाकी विरोधनीहै, नहीतो तिसके भक्तोकों द्वेष क्यों कर उत्पन्न होवे, इस वास्ते जैन मत इस अवसर्पिणिमे श्री रुषभदेवजीसें लेकर श्रीमहावीर पर्यंत चौवीस तीर्थंकरोंका चलाया हुआ चलताहै परंतु कल्पित नहीहै.

प्र.८९—बुद्धकी उत्पतिकी कथा आपने किसी श्वेतांबरमतके पुस्तकोमें वांची है ?

कथन कराकी मांसमें जीव नही है, इस वास्ते इसके खानेमें पाप नही लगताहै. फल, दुध, दहिं तरे तथा मदीरा पीनेमेंन्नीपाप नही है. ढीला द्रव्य होनेसें जलवत्. इस तरेकी प्ररूपणा करके तिसने बौद्धमत चलाया, और यहन्नी कथन करा के सर्व पदार्थ क्षणिकहै, इस वास्ते पाप पुन्यका कर्त्ता अन्यहै, और न्नोक्ता अन्यहै. यह सिद्धांत कथन करा. बौद्धमतके पुस्तकोमें ऐसान्नी लेखहै कि, बुधका एक देवदत्तनामा शिष्य था. तिसने बुधके साथ बुधकों मांस खाना छुडानेके वास्ते बहुत झगडा करा, तोन्नी शाक्यमुनि बुधनें मांस खाना न छोडा, तब देवदत्तने बुधकों छोड दीया, जब बुधने काल करा था, तिस दिनन्नी चंदनामा सोनीके घरसें चावलोंकेबीच सूयरका मांसरांधा हुआ खाके मरणको प्राप्त हुआ. यह कथनन्नी बु-

दिकम्मं ॥ अणोतंमुंजदीसिद्धंतं ॥ परिकप्पिकू-
णणूणं ॥ वसिकिच्चाणिरयमुववणो ॥५॥ इतिइ-
नकी भाषा अथ बौद्धमतकी उत्पत्ति लिखते है.
श्री पार्श्वनाथके तीर्थमें सरयू नदीके कांठे ऊपर
पलासनामे नगरमें रहा हुआ, पिहिताश्रव नामा
मुनिका शिष्य बुद्धकीर्ति जिसका नाम था, ए-
कदा समय सरयू नदीमें बहुत पानीका पुर चढी
आया तिस नदीके प्रवाहमें अनेक मरे हुए, मछ
वहते हुए कांठे उपर आ लगे, तिनको देखके
तिस बुद्धकीर्तिने अपने मनमें ऐसा निश्चय क-
राकि स्वतः अपने आप जो जीव मर जावे ति-
सके मांस खानेमे क्या पापहै, तब तिसनेअंगी-
कार करी हुइ प्रवज्याव्रत रूप छोरू दीनी अर्थात्
पूर्वे अंगीकार करे हुए धर्मसें भ्रष्ट होके मांस
भक्षण करा. और लोकोंके आगे ऐसा अनुमान

उ-पावापुरी नगरीके हस्तिपाल राजाकी दफतर लिखनेकी सन्नामें निर्वास हुआथा, और विक्रमसें ४७० वर्ष पहिलें और संप्रति कालके १९४५ के सालसें २४१५ वर्ष पहिलें निर्वाण हुआथा.

प्र. ७६-जिस दिन भगवंतका निर्वाण हुआ था सो कौनसा दिन वा रात्रिथी ?

उ,-भगवंतका निर्वाण कार्त्तिक वदि अमावस्याकी रात्रिके अंतमें हुआथा.

प्र. ७७- तिस दिन रात्रिकी यादगीरी वास्ते कोइ पर्व हिंदुस्थानमे चलताहै वा नहीं ?

उ -हिंदु लोकमें जो दिवालीका पर्व चलताहै, सो श्री महावीरके निर्वाणके निमित्तसेंही चलताहै.

प्र. ७८-दिवालिकी उत्पत्ति श्री महावीरके निर्वाणसें किसतरें प्रचलित हुइहै ?

उ.–बारां वर्ष १२ ब ६ मास १५ पंदरा दिन छद्मस्थ रहे. और तीस वर्ष केवली रहेहै.

प्र. ८४–भगवंतने छद्मस्थावस्थामें किस किस जगे चौमासे करे. और केवली हुए पीछे किस किस जगे चौमासे करेथे ?

उ.—अस्थि ग्राममें १, दुसरा राजगृहमें, २, तीसरा चंपामें ३, चौथा पृष्ट चंपामें ४, पांचमा भाद्दिकामें ५, छठा भद्दिकामें ६, सातमा आलंभियोंमे ७, आठमा राजगृहमे ८ नवमाअनार्यदेशमे ९, दशमा सावत्थिमे १०, इग्यारमा विशालामे ११, बारमा चंपामे १२, येह १२ छद्मस्थावस्थाके चौमासे करे केवली हुए. पीछे १२ राजगृहमें ११ विशालामें ६ मिथलामें १ पावापुरीमें एवं सर्व ३० हुए.

प्र. ८५--श्रीमहावीरस्वामीका निर्वाण किस जगें और कब हुआ था?

वंतकी बेटी प्रियदर्शना, और ज्ञगवंतका जमाइ जमाली, इनका क्या वर्त्तत हूआ था ?

उ.—नंदीवर्द्धन राजातो श्रावक धर्म पालता रहा और यशोदाजी श्राविका तो थी, परंतु यशोदाने दीक्षा लीनी मैंने किसी शास्त्रमें नही वांचाहै. और ज्ञगवंतकी पुत्रीने एक हजार स्त्रीयोंके साथ और जमाइ जमालिने ५०० पांचसौ पुरुषोंके साथ ज्ञगवंत श्री महावीरजीके पास दीक्षा लीनीथी.

प्र. ८३—श्रीमहावीर ज्ञगवंतने जो अंतमें सोलां पोहर तक देशना दीनीथी, तिसमे क्या क्या उपदेश कराथा ?

उ.—ज्ञगवंतने सबसें अंतकी देशनामें ५५ पचपन अशुज्ञ कर्मोंके जैसें जीव ज्ञवांतरमें फल ज्ञोगतेहै, ऐसे अध्ययन और पचपन ५५ शुज्ञ

उ.—हां, कोइन्नी क्षणमात्र आयु अधिक नही वधा सक्ता है.

प्र.९१—कितनेक मतावलंबी कहतेहै कि योगाभ्यासादिके करनेसें आयु वध जाताहै, यह कथन सत्यहै वा नही ?

उ.—यह निकेवल अपनी महत्वता वधाने वास्ते लोकों गप्पे गेकतेहै, क्योंकी चोवीस तीर्थंकर, ब्रह्मा, विष्नु, महेश, पातंजली, व्यास, ईशामसीह, महम्मद प्रमुख जे जगतमें मतचलाने वाले सामर्थ पुरुष गिने जातेहै, वेन्नी आयु नही वधा सकेहै, तो फेर सामान्य जीवोंमें तो क्या शक्तिहै के आयु वधा सके, जेकर किसीने वधाइ होवे तो अब तक जीता क्यों नही रहा.

प्र. ९२—न्नगवंतका न्नाइ नंदिवर्द्धन, और न्नगवंतकी संसारावस्थाकी यशोदा स्त्री और न्नग-

वंतकी बेटी प्रियदर्शना, और ज्ञगवंतका जमाइ जमाली, इनका क्या वर्तंत हूआ था ?

ञ.–नंदीवर्द्धन राजातो श्रावक धर्म पालता रहा और यशोदाज्ञी श्राविका तो थी, परंतु यशोदाने दीक्षा लीनी मैंने किसी शास्त्रमें नही वांचाहै. और ज्ञगवंतकी पुत्रीने एक हजार स्त्रीयोंके साथ और जमाइ जमालिने ५०० पांचसौ पुरुषोंके साथ ज्ञगवंत श्री महावीरजीके पास दीक्षा लीनीथी.

प्र. ए३–श्रीमहावीर ज्ञगवंतने जो अंतमें सोलां पोहर तक देशना दीनीथी, तिसमे क्या क्या उपदेश कराथा ?

ञ.–ज्ञगवंतने सर्वसें अंतकी देशनामें ५५ पचपन अशुज्ञ कर्मोंके जैसें जीव ज्ञवांतरमें फल ज्ञोगतेहै, ऐसे अध्ययन और पचपन ५५ शुज्ञ

उ.—हां, कोइन्नी क्षणमात्र आयु अधिक नही वधा सक्ता है.

प्र.८१—कितनेक मतावलंवी कहतेहै कि योगाज्न्यासादिके करनेसें आयु वध जाताहै, यह कथन सत्यहै वा नही ?

उ.—यह निकेवल अपनी महत्वता वधाने वास्ते लोकों गप्पे गोकतेहै, क्योंकी चौवीस तीर्थंकर, ब्रह्मा, विष्नु, महेश, पातंजली, व्यास, ईशामसीह, महम्मद प्रमुख जे जगतमें मतचलाने वाले सामर्थ पुरुष गिने जातेहै, वेज्नी आयु नही वधा सकेहै, तो फेर सामान्य जीवोंमें तो क्या शक्तिहै के आयु वधा सके; जेकर किसीने वधाइ होवे तो अव तक जीता क्यों नही रहा.

प्र. ८२—ज्नगवंतका ज्नाइ नंदिवर्द्धन, और ज्नगवंतकी संसारावस्थाकी यशोदा स्त्री और ज्नग-

उ.—यह कथन सत्य नहीं, क्योंकि कल्पसूत्रकी मूल टीकासें विरुद्धहै, और श्री भद्रबाहुस्वामीने उत्तराध्ययनकी निर्युक्तिमें ऐसा कथन कराहै कि उत्तराध्ययनका दूसरा परीषहाध्ययनतो कर्मप्रवाद पुर्वके १७ सत्तरमें पाहुडसें उद्धार करके रचाहै, और आठमाध्ययन श्री कपिल केवलीने रचाहै, और दशमाध्ययन जब गौतमस्वामी अष्टापदसें पीछे आएहै, तब भगवंतने गौतमको धीर्य देने वास्ते चंपानगरीमें कथन करा था, और २३ मा अध्ययन केशीगौतमके प्रश्नोत्तर रूप स्थिवरोने रचाहै. कितने अध्ययन प्रत्येकबुद्धि मुनियोंके रचे हुएहै. और कितनेक जिन भाषित है. इस वास्ते उत्तराध्ययन दिवालीकी रात्रीमे कथन करासिद्ध नही होताहै.

प्र. ९५—निर्वाण शब्दका क्या अर्थ है ?

कर्मोके जैसे नवांतरमें जीव फल न्नोगतेहै, ऐसे अध्ययन और उत्तीस ३६ विना पूठयां प्रश्नोके उत्तर कथन करके पीठे ५५, पचपन शुन्न विपाक फल नामे अध्ययनोंमेंसें एक प्रधान नामे अध्ययन कथन करते हुए निर्वाण प्राप्त हुए थे. यह कथन संदेह विषौषधी नामे ताड पत्रोपर लिखी हुइ पुरानी कल्पसूत्रकी टीकामें है. येह सर्वाध्ययन श्री सुधर्मास्वामीजीने सूत्ररूप गूंथे होवेंगे के नही, ऐसा लेख मेरे देखनेमें किसी शास्त्रमें नही आया है.

प्र. ए४- जैनमतमे यह जो रूढिसें कितनेक लोक कहते है कि श्री उत्तराध्ययनजीके उत्तीस अध्ययन दिवालीकी रात्रीमें कथन करके ३७ सैंतीसमा अध्ययन कथम करते हुए मोक्ष गये, यह कथन सत्य है, वा नही ?

कौन ले जाताहै ?

उ.–आत्मामें ऊर्ध्वगमन स्वभावहै, तिससें आत्मा लोकाग्र तक जाताहै.

प्र. ९९–आत्मा लोकाग्रसें आगे क्यों नही जाताहै ?

उ.–आत्मामें ऊर्ध्वगमन स्वभाव तो है, परंतु चलनेमे गति साहायक धर्मास्तिकाय लोकाग्रसें आगे नहीहै, इस वास्ते नही जाताहै. जैसें मछमे तरनेकी शक्तितो है, परंतु जल विना नही तरसक्ताहै, तैसें मुक्तात्माभी जानना.

प्र. १००–सर्व जीव किसी कालमें निर्वाण पद पावेंगे के नही ?

उ.–सर्व जीव निर्वाण पद किसी कालमे भी नही पावेंगे.

प्र १०१–क्या सर्व जीव एक सरीखे नही

उ.—सर्व कर्म जन्य उपाधि रूप अग्निका जो बुझ जाना तिसको निर्वाण कहते है, अर्थात् सर्वोपाधिसें रहित केवल, शुद्ध, बुद्ध सच्चिदानंद रूप जो आत्माका स्वरूप प्रगट होना, तिसको निर्वाण कहते है.

प्र. ९६—जीवको निर्वाण पद कब प्राप्त होता है?

उ. जब शुभाशुभ सर्व कर्म जीवके नष्ट हो जातेहै तब जीवको निर्वाणपद प्राप्त होताहै.

प्र ९७—निर्वाण हूआ पीछे आत्मा कहां जाता है, और कहां रहताहै?

उ.—निर्वाण हूआ पीछे आत्मा लोकके अग्र भागमे जाताहै, और सादिअनंत काल तक सदा तहांही रहताहै.

प्र. ९८—कर्म रहित आत्माको लोकाग्रमें

उपादान कारणसें भिन्न नही होता है.

प्र. १०६--ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगेतो इसमे क्या हानि है ?

उ.--ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगे तो नरक तिर्यचकी गतिमेंभी ईश्वरही जावेगा, और धर्माधर्मभी सर्व ईश्वरही करनवाला और चौर, यार, लुच्चा, लफंगा, अगम्य गामी इत्यादि सर्व कामका कर्ता ईश्वरही सिद्ध होवेगा, तवतो वेदपुराण, वैवल, कूरान प्रमुख शास्त्रभी ईश्वरने अपनेही प्रतिवोध वास्ते रचे सिद्ध होवेगे, तवतो ईश्वर अज्ञानी सिद्ध होवेगा. जव अज्ञानी सिद्ध हुआ तवतो तिसके रचे शास्त्रभी जूठे और निष्फल सिद्ध होवेगे, ऐसे जव सिद्ध होगा तवतो माता, वहिन, वेटीके गमन ..ने ी शंका नही रहेगी, जिसके मनमें जो

उ.—जिस वस्तुकी उत्पत्ति होतीहै, सो नाशवंत होता है, परंतु आत्माकी उत्पत्ति नही हुइहै, क्योंकि जिस वस्तुकी उत्पत्ति होतीहै तिसका उपादान अर्थात् जिसकी आत्मा बन जावे जैसें घमेका उपादान मिट्टीका पिन्ड है, सो उपादान कारण कोइ अरूपी ज्ञानवंत वस्तु होनी चाहिये, जिसमें आत्मा बने, ऐसा तो आत्मासें पहिलां कोइभी उपादान कारण नही है; इसवास्ते आत्मा अनादि अनंत अविनाशी वस्तु है.

प्र १०५—जेकर कोइ ऐसे कहे आत्माका उपादान कारण ईश्वर है, तबतो तुम आत्माको अनित्य मानोगेके नही.

उ—जब ईश्वर आत्माका उपादान कारण मानोगे, तबतो ईश्वर और सर्व अनंत संसारी आत्मा एकही हो जावेगी, क्योंकि

उपादान कारणसें भिन्न नही होता है.

प्र. १०६--ईश्वर और सर्व ससारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगेतो इसमे क्या हानि है ?

उ.-ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगे तो नरक तिर्यंचकी गतिमेंभी ईश्वरही जावेगा, और धर्माधर्मभी सर्व ईश्वरही करनवाला और चौर, यार, लुच्चा, लफंगा, अगम्य गामी इत्यादि सर्व कामका कर्ता ईश्वरही सिद्ध होवेगा, तबतो वेदपुराण, वैबल, कूरान प्रमुख शास्त्रभी ईश्वरने अपनेही प्रतिबोध वास्ते रचे सिद्ध होवेगे, तबतो ईश्वर अज्ञानी सिद्ध होवेगा. जब अज्ञानी सिद्ध हुआ तबतो तिसके रचे शास्त्रभी जूठे और निष्फल सिद्ध होवेगे, ऐसे जब सिद्ध होगा तबतो माता, बहिन, वेटीके गमन करनेकी शंका नही रहेगी, जिसके मनमें जो

उ.—जिस वस्तुकी उत्पत्ति होतीहै, सो नाशवंत होता है, परंतु आत्माकी उत्पत्ति नही हुइहै, क्योंकि जिस वस्तुकी उत्पत्ति होतीहै तिसका उपादान अर्थात् जिसकी आत्मा बन जावे जैसें घमेका उपादान मिट्टीका पिंम है, सो उपादान कारण कोइ अरूपी ज्ञानवंत वस्तु होनी चाहिये, जिसमें आत्मा बने, ऐसा तो आत्मासें पहिलां कोइभी उपादान कारण नही है; इसवास्ते आत्मा अनादि अनंत अविनाशी वस्तु है.

प्र १०५—जेकर कोइ ऐसे कहे आत्माका उपादान कारण ईश्वर है, तवतो तुम आत्माकों अनित्य मानोगेके नही.

उ—जब ईश्वर आत्माका उपादान कारण मानोगे, तबतो ईश्वर और सर्व अनंत संसारी आत्मा एकही हो जावेगी, क्योंकि कार्य अपणे

उपादान कारणसें भिन्न नही होता है.

प्र. १०६--ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगेतो इसमे क्या हानि है ?

उ.-ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगे तो नरक तिर्यंचकी गतिमेंभी ईश्वरही जावेगा, और धर्माधर्मभी सर्व ईश्वरही करनवाला और चोर, यार, लुच्चा, लफंगा, अगम्य गामी इत्यादि सर्व कामका कर्ता इश्वरही सिद्ध होवेगा, तवतो वेदपुराण, बैबल, कूरान प्रमुख शास्त्रभी ईश्वरने अपनेही प्रतिवोध वास्ते रचे सिद्ध होवेगे, तवतो ईश्वर अज्ञानी सिद्ध होवेगा. जब अज्ञानी सिद्ध हुआ तवतो तिसके रचे शास्त्रभी जूठे और निष्फल सिद्ध होवेगे, ऐसे जव सिद्ध होगा तवतो माता, बहिन, वेटीके गमन करनेकी शंका नही रहेगी, जिसके मनमें जो

मोक्ष होवेगा, तवतो तीर्थंकर जगवंतकी जक्ति करनेका क्या प्रयोजन है ?

ज.–तीर्थंकर जगवंतकी भक्ति करनेंमें तीर्थंकर जगवंत निमीत्त कारणहै. विना निमत्तके अपनी आत्माके गुणरुप उपादान कारण कदेइ फल नही देताहै. तीर्थंकर निमित्तजूत होवे तव जक्तिरुप उपादान कारण प्रगट होताहै तिससेंही; आत्माके सर्व गुण प्रगट होतेहै, तिनसें मोक्ष होताहै. जैसे घट होनेमे मिट्टी उपादान कारनहै, परंतु विना कुलाल चक्र दंड चीवरादि निमित्तके कदापि घट नहि होताहै, तैसेंही तीर्थंकर रुप निमित्त कारण विना आत्माकों मोक्ष नही होता है, इस वास्ते तीर्थंकरकी जक्ति अवश्य करने योग्यहै.

प्र. ११९–जगतमे जीव पुन्य पाप करतेहै

तिनके फलका देनेवाला परमेश्वरहै वा नही?

उ.—पुन्य पापके फलका देनेवाला परमेश्वर नही है.

प्र. ११३—पुन्य पापके फलका दाता ईश्वर मानिये तो क्या हरज है?

उ.—ईश्वर पुन्य पापका फल देवे तब तो ईश्वरकी ईश्वरताकों कलंक लगता है.

प्र. ११४—क्या कलंक लगताहै?

उ.—अन्यायता, निर्दयता, असमर्थता अज्ञानतादि.

प्र. ११५—अन्यायता दूषण ईश्वरकों पुन्य पापके फल देनेसें कैसें लगताहै?

उ.—जब एक आदमीनें तलवारादिसें किसी पुरुषका मस्तक छेदा, तब मस्तकके छिदनेसें उस पुरुषकों जो महा पीडा भोगनी पडीहै,

सो फल ईश्वरने डुसरे पुरुषके हाथसें उसका मस्तक कटवाके भुक्ताया, तद पीछे तिस मारने वालेकों फांसी आदिकसें मरवाके तिसकों तिस शिर छेदन रूप अपराधका फल भुक्ताया, ईश्वरनें पहिलां तिसका शिर कटवाया, पीछे तिसकों फांसी देके तिस शिर छेदनेका फल भुक्ताया; ऐसे काम करनेसें ईश्वर अन्यायी सिद्ध होताहै.

प्र. ११६—पुन्य पापके फल भुक्तानेसें ईश्वरमें निर्दयता क्यों कर सिद्धहोतीहै:

उ.—जव ईश्वर कितने जीवांकों महा डुखी करताहै, तव निर्दयी सिद्ध होताहै, शास्त्रोंमेंतो ऐसें कहताहै किसी जीवकों मत मारना, डुखीभी न करनां, भूखेकों देखके खानेकों देनां, और आप पूर्वोक्त काम नही करताहै, जीवांकों मारताहै, महा डुखी करताहै. भूखसें लाखो क

रोगों मनुष्य कालादिमें मर जातेहै, तिनकों खानेकों नही देताहै इस वास्ते निर्दयी सिद्ध होताहै.

प्र. ११७–ईश्वरतो जिस जीवने जैसा जैसा पुन्य पाप कराहै तिसको तैसा तैसा फल देता है. इसमे ईश्वरकों कुछ दोष नहि लगताहै, जैसें राजा चौरकों दंड देताहै और अछे काम करने वालेकों इनाम देताहै.

उ.–राजातो सर्वचोराकों चोरी करनेसें बंद नही कर सकता है. चाहतातोहै कि मेरे राज्यमें चोरी न होवेतो ठीकहै, परंतु ईश्वरकों तो लोक सर्व सामर्थ्यवाला करतेहै, तो फेर ईश्वर सर्व जीवांकों नवीन पाप करनेसे क्यों नही मनै करताहै. मनै न करनेसें ईश्वर जान बुझके जीवोसें पाप करताहै. फेर तिसका दंड देके जी

वोंकों दुखी करताहै. इस हेतुसेंही अन्यायी, निर्दयी, असमर्थ ईश्वर सिद्ध होताहै. इस वास्ते ईश्वर भगवंत किसीकों पुन्य पापका फल नही देताहै. इस चर्चाका अधिक स्वरुप देखनां होवे तो हमारा रचा हुआ जैनतत्त्वादर्शनामा पुस्तक वांचनां.

प्र. ११८—जब ईश्वर पुन्य पापका फल नही देता है, तो फेर पुन्य पापका फल क्योंकर जीवांको मिलताहै ?

उ.—जब जीव पुन्य पाप करतेहै तब तिनके फल भोगनेके निमित्तभी साथही होनेवाले बनाता करताहै, तिन निमित्तो द्वारा जीव शुभाशुभ कर्मोका फल भोगतेहै, तिन निमित्तोका नामही अज्ञ लोकोने ईश्वर रख छोडाहै.

प्र. ११९—जगतका कर्ता ईश्वर है के नही?

उ.–जगततो प्रवाहसें अनादि चला आता है, किसीका मूलमें रचा हुआ नही है. काल १ स्वन्नाव २ नियते ३ कर्म ४ चेतन आत्मा श्रीर जड पदार्थ इनके सर्व अनादि नियमोसें यह जगत विचित्ररूप प्रवाहसें चला हुआ उत्पाद व्यय ध्रुव रुपेंसे इसी तरे चला जायगा.

प्र. १२०–श्री महावीरस्वामीए तीर्थंकरोकी प्रतिमा पूजनेका उपदेश कराहै के नही ?

उ.–श्री महावीरजीने जिन प्रतिमाकी पूजा द्रव्ये श्रीर न्नावेतो गृहस्थकों करनी बतायि है श्रीर साधुयोंकों न्नावपूजा करनी बताइ है.

प्र. १२१–जिन प्रतिमाकी पूजा विना जिनकी न्नक्ति हो शक्तीहै के नही ?

उ.–प्रतिमा विना न्नगवंतका स्वरुप स्मरण नही हो शक्ताहै, इस वास्ते जिन प्रतिमा

विना गृहस्थलोकोसे जिनराजकी भक्ति नही हो सक्ती है.

प्र. १२२–जिन प्रतिमातो पाषाणादिककी बनी हुइहै, तिसके पूजने गुणस्तवन करनेसें क्या लाभ होताहै ?

उ.–हम पथ्थर जानके नही पूजतेहै, किन्तु तिस प्रतिमा द्वारा साक्षात् तीर्थंकर भगवंतकी पूजा स्तुति करतेहै. जैसे सुंदर स्त्रीकी तसवीर देखनेसे असल स्त्रीका स्मरण होकर कामी काम पीडित होताहै तैसेही जिन प्रतिमाके देखनेसें भक्तजनोको असली तीर्थंकरका रूपका स्मरण होकर भक्तोंका जिन भक्तिसें कल्याण होता है.

प्र. १२३–जिन प्रतिमाकी फूलादिसें पूजा करनेसें श्रावकोंको पाप लगताहै के नही ?

उ.–जिन प्रतिमाकी फूलादिसें पूजा कर-

नेसें संसारका क्षय करे, अर्थात् मोक्ष पद पावे; और जो किंचित् द्रव्य हिंसा होतीहै, सो कूपके दृष्टांतसें पूजाके फलसेंही नष्ट होजातिहै, यह कथन आवश्यक सूत्रमेंहै.

प्र. १२४- सर्व देवते जैनधर्मी है ?

उ.—सर्व देवते जैनधर्मी नहीहै, कितनेकहै.

प्र. १२५—जैनधर्मी देवताकी भगती श्रावक साधु करे के नही ?

उ.—सम्यग् दृष्टी देवताकी स्तुति करनी जैनमतमें निषेध नही, क्योंकि श्रुत देवता ज्ञानके विघ्नोकों दुर करतेहै, सम्यग् दृष्टी देवतेधर्ममे होते विघ्नोकों दुर करतेहै, और कोइ भोला जीव इस लोकार्थके वास्ते सम्यग् दृष्टि देवतायोंका आराधन करेतो तिसकाभी निषेध नही है, साधुभी सम्यग दृष्टि देवताका आराधन स्तु-

ति जैनधर्मकी उन्नति तथा विघ्न दुर करने वास्ते करेतो निषेध नही. यह कथन पंचाशकादि शास्त्रोंमें है.

प्र. १२६—सर्व जीव अपने करे हूए कर्मका फल भोगते है, तो फेर देव ते क्या कर सक्ते है.

उ.—जैसें अशुभ निमित्तोकें मिले अशुभ कर्मका फल उदय होता है, तैसे शुभ निमित्तोके मिलनेसें अशुभ कर्मोदय नहभी हो जाता है, इस वास्ते अशुभ कर्मोके उदयकों दुर करनेमे देवताभी निमित्त है.

प्र १२७—जैनधर्मी अथवा अन्यमति देवते विना कारण किसीकों दुख दे सक्ते है के नही ?

उ.—जिस जीवके देवताके निमित्तसें अ-

शुभ कर्मका उदय होना है तिसकों, तो देषादि कारणसे देवते दुख दे सक्तेहै, अन्यको नही.

प्र. १२८–संप्रतिराजा कौन था ?

उ.–राजगृह नगरका राजा श्रेणिक जिसका दुसरा नाम भंभसार था, तिसकी गद्दी ऊपर तिसका वेटा अशोकचंद्र दूसरा नाम कोणिक वैठा, तिसने चंपानगरीकों अपनी राजधानी करी, तिसके मरां पिछे तिसकी गद्दी ऊपर तिसका वेटा उदायि वैठा, तिसने अपनी राजधानी पाडलीपुत्र नगरमें करी सो उदायि विना पुत्रके मरण पाया, तिसकी गद्दी उपर नायिका पुत्र नंद वैठा, तिसकी नव पेढीयोने नंदही नामसें राज्य करा, वे नव नंद कहलाए नवमें नंद की गद्दी उपर मौर्यवंशी, चंद्रगुप्तराजा वैठा, तिसकी गद्दी उपर तिसका पुत्र बिंदुसार वैठा,

तिसकी गद्दी ऊपर तिसका बेटा अशोकश्रीराजा बैठा, तिसका पुत्र कुणाल आंखासें अंधा था इस वास्ते तिसकों राज गद्दी नही मिली, तिस कुणालका पुत्र संप्रति हुआ, सो जिस दिन जन्म्याथा तिस दिनही तिसकों अशोकश्री राजाने अपनी राज गद्दी ऊपर बैठाया, सो संप्रति नामे राजा हुआहै, श्रेणिक १ कोणिक २ उदायि ३ यह तीनो तो जैनधर्मी थे. नव नंदोकी मुझे खबर नही, कौनसा धर्म मानते थे. चंद्रगुप्त १ बिंडुसार ए दोनो जैनी राजे थे, अशोकश्रीभी जैनराजा था, पीछेसें केइक बौद्धमति हो गया कहतेहै, और संप्रति तो परम जैनधर्मीराजा था.

प्र. १२९—संप्रति राजाने जैनधर्मके वास्ते क्या क्या काम करेथे.

उ.—संप्रतिराजा सुहस्ति आचार्यका श्रा-

वक शिष्य १२ वारां व्रतधारी था; तिसने द्रविम् अंध्र करणाटादि और कावुल कुराशानादि अनार्य देशोमें जैनसाधुयोका विहार करके तिनके उपदेशसें पूर्वोक्त देशोमें जैनधर्म फैलाया और निनानवे ९९००० हजार जीर्ण जिन मंदरोंका उद्धार कराया, और छव्वीस २६००० हजार नवीन जिनमंदिर वनवाए थे, और सवाकिरोम् १२५००००० जिन प्रतिमा नवीन वनवाइ थी, जिनके वनाए हूए जिनमंदिर गिरनार नमोलादि स्थानोमे अवज्ञी मौजूद खम्हे है, और तिनकी वनवाइ हुइ सैंकमो जिन प्रतिमाज्ञी महा सुंदर विद्यमान कालमे विद्यमान है, और संप्रति राजा ने ७०० सौ दानशाला करवाइ थी. और प्रजाके महा हितकारी उषधशालादिज्ञी वनवाइ थी, इत्यादि संप्रतिराजाने जैनमतकी वृद्धि और प्र-

न्नावना करी श्री. विरात् १०१ वर्ष पीछे हुआ है,

प्र. १३०–मनुष्योंमे कोइ ऐसी शक्ति विद्यमानहै कि जिसके प्रन्नावसें मनुष्य अद्भुत काम कर सक्ताहै ?

ज.–मनुष्यमें अनंत शक्तियों कर्मोके आवरणसें ढंकी हुइहै, जेकर वे सर्व शक्तियां आवरण रहित हो जावेंतो मनुष्य चमत्कारी अद्भुत काम कर सक्तेहै.

प्र. १३१–वेशक्तियां किसने ढांक गेर्रीहै ?

ज. आठ कर्मोकी अनंत प्रकृतियोने आछादन कर गेर्रीहै.

प्र. १३२ हमनेतो आठ कर्मकी १४८ वा १५८ प्रकृतियां सुनीहै, तो तुम अनंत किस तरेसें कहेते है ?

ज. – १४८ वा १५८ यह मध्य प्रक-

तियांके भेदहै, और उत्कृष्ट तो अनंत भेद है, क्योंके आत्माके अनंत गुणहै, तिनकै ढांकनेवालीयां कर्म प्रकृतियांभी अनंत है.

प्र. १३३—मनुष्यमें जो शक्तियां अद्भुत काम करनेवालीयांहै तिनका खोल्हासा नाम लेके वतलाउ, और तिनका किंचित् स्वरूपभी कहो, और यह सर्व लब्धियां किस जीवकों किस कालमें होतीयाहै ?

उ.—आमोसहि लद्धी १ जिस मुनिके हाथादिके स्पर्श लगनेसें रोगीका रोग जाए, तिसका नाम आमर्षोषधि लब्धि है, मुनि तिस लब्धिवाला कहा जाताहै, यह लब्धि साधुकोंही होती है.

विप्पोसही लद्धी २—जिस साधुके मलमूत्रके लगनेसें रोगीका रोग जाए, तिसका नाम

कालमें उत्पन्न हुआहै; अथवा अढाइ द्वीपके म
ज्योंके मनके बादर परिणामा जाणे तिसकों रु
मति लब्धि कहते है, यह निश्चय साधुकों होत
अन्यकों नही.

विपुलमइ लद्धी ए—जिस मनः पर्याय
रूजुमतिसें अधिक विशेष जाणें, जैसें इसने र
नेका घट चिंतन कराहै, पाटलिपुत्रका उत्पन
हूआ वसंतरुतुका अथवा अढाइ द्वीपके संज्ञी व
वांके मनके सूक्ष्म पर्यायांकोंभी जाणे, तिसक
विपुलमति लब्धि कहतेहै, इसका स्वामी साधुह
होवे यह लब्धि केवल ज्ञानके विना हुअ
जाए नही.

चारण लद्धी १०—चारण दो तरेके होतेहै
एक जंघा चारण १ दूसरा विद्या चारण १ जंघ
चारण उसकों कहतेहै जिसकी जंघायोमें आका

शमें उम्नेकी सक्ति उसन्न होवे सो ऊंधा चार
ण. ऊंचातो मेरु पर्वतके शिखर तक उम्के जा-
सक्ताहे, और तिरछा तेरमे रूचक द्वीप तक जा-
सकताहे, और विद्याचारण ऊंचा मेरु शिखरतक
और तिरछा आठमें नंदिश्वर द्वीप तक विद्याके
प्रज्ञावसें जा सक्ताहे. येह दोनो प्रकारकी लब्धि-
कों चारण लब्धि कहतेहे, यह साधुकों होतीहे

आसीविप लद्दी ११—आशी नाम दाढाका
है, तिनमें जो विष होवे सो आशीविप. सो दो
प्रकारेहे, एक जाति आशीविप दूसरा कर्म आ-
शीविष, तिनमें जाति जहरीके चार न्नेद है.
विछु १ सर्प २ मींम्क ३ मनुष्य ४ और तप क-
रनेसें जिस पुरुपको आशीविष लब्धि होती है
सो शाप देके अन्यको मार सक्ताहे, तिसकोंन्नी
आशीविष लब्धि कहतेहे.

केवल लद्धी १२—जिस मनुष्यको केवल ज्ञान होवे, तिसकों केवल नामे लब्धि है.

गणहर लद्धी १३—जिससें अंतर मुहूर्त्तमें चौदह पूर्व गूंथे और गणधर पदवी पामे, तिसकों गणधर लब्धि कहते है.

पुव्वधर लद्धि १४ जिससें चौदह पूर्व दश पूर्वादि पूर्वका ज्ञान होवे, सो पूर्वधर लब्धि.

अरहंत लद्धी १५—जिससें तीर्थंकर पद पावे, सो अरहंत लब्धि.

चक्कवट्टि लद्धी १६—चक्रवर्त्तीकों चक्रवर्त्ती लब्धि.

वलदेव लद्धी १७—वलदेवकों वलदेव लब्धि.

वासुदेव लद्धी १८—वासुदेवकों वासुदेवकी लब्धि.

खीरमहुसप्पिआसव लद्धी १९—जिसके

रूपके सुननेसे जिसको अनेक प्रकारका ज्ञान होवे, सो वीजबुद्दि लब्धि है.

तेजलेसा लद्धी २३–जिस साधुके तपके प्रभावसें ऐसी शक्ती उत्पन्न होवेके जेकर क्रोध चढे तो मुखक फुंकारेसें कितनेही देशांको वालके भस्म कर देवे, तिसको तेजोलेश्या लब्धि कहते है.

आहारए लद्धी २४–चउदह पूर्वधर मुनि तीर्थंकरकी रुद्दि देखने वास्ते, १ वा कोइ अर्थ अवगाहन करने वास्ते अथवा अपना संशय दूर करने वास्ते अपने शरीरमें हाथ प्रमाण स्फटिक समान पूतला काढके तीर्थंकरके पास भेजताहै तिस पूतलेसे अपने कृत्य करके पाछा शरीरमें संहार लेताहै तिसका आहारक लब्धि कहतेहै,

सीयलेसा लद्धी २५–तपके प्रभावसें मु-

निकों ऐसी शक्ति उत्पन्न होतीहै के जिससें तेजो लेश्याकी उश्नताकों रोक देवे, वस्तुकों दग्ध न होने देवे, तिसकों शीतलेशा लब्धि कहते है.

वेउव्विदेह लद्धी २६ जिसकी सामर्थ्रसें अणुकी तरें सूक्ष्म कण मात्रमें हो जावे, मेरुकी तरें भारी देह कर लेवे, अर्क तुलकी तरें लघु हलका देह कर लेवे, एक वस्त्रमेंसें वस्त्र करोडों और एक घटमेंसें घट करोडों करके दिखला देवे, जैसा इच्छे तैसा रुप कर सके, अधिक अन्य क्या कहिये, तिसका नाम वैक्रिय लब्धि है.

अरकीणमहाणसी लद्धी २७–जिसके प्रभावसें जिस साधुनें आहार आणाहै, जहां तक सो साधु न जीमे तहां तक चाहो कितनेही साधु तिस भिक्षामेंसे आहार करे तोभी खूटे नही, तिसकों अक्षीणमहानसिक लब्धि कहते है.

पुलाय लब्धी २८–जिसके प्रन्नावसें धर्मकी रक्षा करने वास्ते धर्मका द्वेषी चक्रवर्त्यादिकों सेना सहित चुर्ण कर शके, तिसकों पुलाकलब्धि कहते है.

पूर्वोक्त येह लब्धीयां पुन्यके और तपके और अंतःकरणके बहुत शुद्ध परिणामोके होनेसें होतेहे, ये सर्व लब्धियां प्रायें तीसरे चौथे आरेमेही होतीयांहै, पंचम आरेकी शरूआतमेन्नी होतीयां है.

प्र. १३४–श्री महावीरस्वामीकों ये पूर्वोक्त लब्धियां २८ अठावीस थी ?

उ.–श्री महावीरजीकोंतो अनंतीयां लब्धियां थी. येह पूर्वोक्ततो २८ अठावीस किस गिनतीमेंहै, सर्व तीर्थंकराकों अनंत लब्धियां होतीहै.

प्र. १३५—इंद्रन्नूति गौतमकों ये सर्व ल-

ब्धियां थी ?

उ. चक्री, बलदेव, वासुदेव रुजुमति, ये नही थी शेष प्राये सर्वही लब्धिया थी.

प्र. १३६–आप महावीरकोंही भगवंत सर्वज्ञ मानतेहो, अन्य देवोंकों नही, इसका क्या कारणहै ?

उ.–अपने २ मतका पक्षपात छोडके विचारीये तो, श्री महावीरजीमेंही भगवंतके सर्व गुण सिद्ध होतेहै, अन्य देवोमें नही.

प्र. १३७–श्री महावीरजीकों हुएतो बहुत वर्ष हुएहै, हम क्योंकर जानेके श्री महावीरजीमेंही भगवानपणेके गुण थे, अन्य देवोमे नही थे ?

उ.- सर्व देवोंकी मूर्तियों देखनेसे और तिनके मतोमें तिन देवोंके जो चरित कथन करेहै तिनके वाचने और सुननेसें सत्य भगवंतके लक्ष

ण और कल्पित भगवंतोंके लक्षण सर्व सिद्धहो जावेगे.

प्र.—१३८ कैसी मूर्त्तिके देखनेंसें भगवंतकी यह मूर्त्ति नही है, ऐसे हम माने ?

उ. जिस मूर्त्तिके संग स्त्रीकी मूर्त्ति होवे तब जाननाके यह देव विषयका भोगी था. जिस मूर्त्तिके हाथमें शस्त्र होवे तब जानना यह मूर्त्ति रागी, द्वेषी वैरीयोंके मारने वाले और असमर्थ देवोकी है. जिस मूर्त्तिके हाथमें जपमाला होवे तब जानना यह किसीका सेवक है, तिससें कुछ मागने वास्ते तिसकी माला जपता है.

प्र. १३९ परमेश्वरकी कैसी मुर्त्ति होतीहै ?

उ.—स्त्री, जपमाला, शस्त्र, कमंडलुसें रहित, और शांत निस्पृह ध्यानारूढ समता मतवारी शांतरस मग्न,मुख विकार रहित, ऐसी सच्चे

देवकी मुर्त्ति होती है.

प्र. १४० जैसे तुमनें सर्वज्ञकी मुर्त्तिके लक्षण कहेहै, तैसें लक्षण प्राये बुद्धकी मुर्त्तिमेंहै, क्या तुम बुद्धको भगवंत सर्वज्ञ मानतेहो ?

उ.–हम निकेवल मुर्त्तिकेही रूप देखनेसें सर्वज्ञका अनुमान नही करतेहै, किंतु जिसका चरितभी सर्वज्ञके लायक होवे, तिसकों सच्चा देव मानते है.

प्र १४१ क्या बुद्धका चरित सर्वज्ञ सच्चे देव सरिखा नहीहै ?

उ बुद्धके पुस्तकानुसार बुद्धका चरित सर्वज्ञ सरीखा नही मालुम होताहै.

प्र. १४२ बुद्धके शास्त्रोंमे बुद्धका किसतरेंका चरित है, जिससें बुद्ध सर्वज्ञ नहीहै ?

उ.–बुद्धका बुद्धके शास्त्रानुसारे यह चरित

जो आगे लिखतेहै, तिसें बुद्ध सर्वज्ञ नही सिद्ध होता है. १ प्रथम बुद्धने संसार छोडके निर्वाणका मार्ग जानने वास्ते योगीयांका शिष्य हुआ, वे योगी जातके ब्राह्मणथे और तिनकों वर्के ज्ञानी भी लिखाहै. तिनके मतकी तपस्यारूप करनीसें बुद्धका मनोर्थ सिद्ध नही हुआ, तब तीनको छोडके बुद्ध गयाके पास जंगलमे जा रहा २, इस उपरके लेखसेतो यह सिद्ध होता है कि बुद्ध कोइ ज्ञानी बुद्धीमान्तो नही था, नहीतो तिनके मतकी निष्फल कष्ट क्रिया काहेको करता, और गुरुयोंके छोडनेसें स्वछंदचारी अविनीतभी इसी लेखसें सिद्ध होताहै १ पीछे बुद्धने उग्र ध्यान और तप करनेमे कितनेक वर्ष व्यतीत करे २ इस लेखसें यह सिद्ध होताहै कि जब गुरूयोंकों छोडा निकम्मे जानके तो फेर तिनका कथन करा हुआ

उग्र ध्यान और तप निष्फल काहेको करा, इस सेंभी तप करता हुआ, जब मुर्गा खाके पड़ा तहां तकभी अज्ञानी था, ऐसा सिद्ध होता है ? पीछे जब बुद्धने यह विचार कराके केवल तप करनेसे ज्ञान प्राप्त नही होताहै, परंतु मनके उधारू करनेसें प्राप्त करना चाहिए, पीछे तिसने खानेका निश्चय करा और तप छोड़ा २ जब ध्यान और तप करनेसें मन न उधाड़ा तो क्या खानेसे मन उधड़ शकताहै, इससें यहभी तिसकी समझ असमंजस सिद्ध होती है १ पीछे अजपाल वृक्षके हेठे पूर्व तर्फ बैठके इसने ऐसा निश्चय कराके जहां तक मै बुद्ध न होवांगा तहां तक यह जगा न छोड़ुगा, तिस रात्रिमे इसकों इछारोध करनेका मार्ग और पुनर्जन्मका कारण और पूर्व जन्मांतरोका ज्ञान उत्पन्न हुआ, दूसरे दिनके सवे-

रेके समय इसका मन परिपूर्ण उघम्ना और स-
र्वोपरि केवलज्ञान उत्पन्न हुआ २ अब विचारीये
जिसने उग्रध्यान आर तप छोम्ह दीया और नि-
त्यप्रते खानेका निश्चय करा तिसका निर्हेतुक इ-
च्छारोध करनेका और पुनर्जन्मके कारणोका ज्ञान
कैसें हो गया, यह केवल अयौक्तिक कथनहै.मो
ग्गलायन और शारिपुत्र ओर आनंदकी कल्पना
सें ज्ञानी लोकोमें प्रसिद्व हुआहै १, बुद्धने यह क
थन करा है आत्मा नामक कोइ पदार्थ नही है
आत्मातो अज्ञानियोने कल्पना करा हैं २ जब
बुद्धने ज्ञानमें आत्मा नही देखा तब केवलज्ञान
किसकों हुआ, और बुद्धने पुनर्जन्मका कारण कि
सका देखा; और पूर्व जन्मांतर करने वाला कि-
सकों देखा, और पुन्य पापका कर्त्ताभूक्ता किस-
को देखा, और निवार्ण पद किसकों हूआ देखा,

जेकर कोइ यह कहेके नवीन नवीन क्षणकों पिछले २ क्षणोकी वासना लगती जाती है, कर्त्ता पिछला क्षणइ, और भोक्त अगला क्षणहै मोक्ष का साधन तो अन्य क्षणने करा, और मोक्ष अगले क्षणकी हुइ, निवार्ण उसकों कहतेहै कि जो दीपककी तरें क्षणोका बुझ जाना, अर्थात् सर्व क्षण परंपरायका सर्वथा अभाव हो जाणा, अथवा शुद्ध क्षणोकी परंपराय रहती है. पांच स्कंधोसें वस्तु उत्पन्न होती है, पांचो स्कंधभी क्षणिकहै, कारण कार्य एक कालमे नही है, इत्यादि सर्व बौद्ध मतका सिद्धांत अयौक्तिक है १ बुद्धके शिष्य देवदत्तने बुधको मांस खाना छुडानेके वास्ते बहुत उपदेश करा परंतु बुद्धने नमाना, अंतमेंभी सूयरका मांस और चावल अपने भक्तके घरसे लेके खाया, और वेदना ग्रस्त होकरके मरा,

और पाणीके जीव बुद्धकों नही दीखे तिशसें कच्चे पानीके पीने और स्नान करनेका उपदेश अपने शिष्योंकों करा, इत्यादि असमंजस मतके उपदेशकका हम क्यों कर सर्वज्ञ परमेश्वर मान सके जो जो धर्मके शब्द बौद्ध मतमें कथन करे है वे सर्व शब्द ब्राह्मणोके मतमेंतो है नही, इस वास्ते वे सर्व शब्द जैन मतसे लीयेहै बुद्धसें पहिलें जैनधर्म था. तिसका प्रमाण हम उपर लिख आए है बुद्धके शिष्य मौद्गलायन और शारिपुत्रन श्री महावीरके चरितानुसारी बुद्धका सर्वसें ऊंचा करके कथन करा सिद्ध होताहै, इस वास्तें जैन मतवाले बुद्धके धर्मकों सर्वज्ञका कथन करा हुआ नही मानते है.

प्र, १४३–कितनेक युरोपीयन विद्वान् ऐसे कहतेहै कि जैन मत ब्राह्मणोंके मतमेंसे लीयाहै;

अर्थात् ब्राह्मणोंके शास्त्रोंकी वाता लेके जैन मत रचा है?

उ.–युरोपीयन विद्वानोंने जैनमतके सर्व पुस्तक वांचे नही मालुम होतेहै, क्योंकि जेकर ब्राह्मणोंके मतमें अधिक ज्ञान होवे. और जैनमतमें तिसके साथ मिलता थोमासा ज्ञान होवे, तब तो हमजी जैनमत ब्राह्मणोंके मतसें रचा ऐसा मान लेवे, परंतु जैनमतका ज्ञानतो ब्राह्मणादि सर्व मतोंके पुस्तकोंसें अधिक और विलक्षणहै, क्योंकि जैनमतके जेद पुस्तक और कर्मो के स्वरुप कथन करनेवाले कर्म प्रकृति, १ पंच संग्रह, २ षट्कर्म ग्रंथादि पुस्तकोमें जैसा ज्ञान कथन करा है, तैसा ज्ञान सर्व डुनियाके मतके पुस्तकोंमे नहीहै, तो फेर ब्राह्मणोंके मतके ज्ञान से जैन मत रचा क्योंकर सिद्धहोवे, बलको यह

तो सिद्धनी हो जावेके सर्व मतोमें जो जो सूक्त वचन रचना है वे सर्व जैनके द्वादशांग समुद्रकेही बिंदु सर्व मतोमे गये हुएहै. विक्रमादित्य राजेके प्रोहितका पुत्र मुकंदनामा चार वेदादि चौदह विद्याका पारगामी तिसने वृद्धवादी जैनाचार्यके पास दीक्षा लीनी. गुरुने कुमुदचंद्र नाम दीना और आचार्यपद मिलनेसें तिनका नाम सिद्धसेन दिवाकर प्रसिद्ध हुआ, जिनके नाम कवि कालीदासने अपने रचे ज्योतिर्विदाभरण ग्रंथमें विक्रमादित्ययकी सभाके पंडितोके नाम लेतां श्रुतसेन नामसें लिखाहै, तिनोनें अपने रचे बत्तीस बत्तीसी ग्रंथमें ऐसा लिखाहै, सुनिश्चितं नःपरतंत्र युक्तिषु ॥ स्फुरंतिया कश्चिन्सुक्तिसंपदः ॥ तवैवताः पूर्वमहार्णवोच्छता ॥ जगत्प्रमाणं जिनवाक्य विप्रुष ॥१॥ उदधाविव सर्व संधव ॥ समुदीरणा

त्वयि नाथ दृष्टयः॥ नचतासु ज्ञवान्प्रदृश्यते ॥ प्रविन्नक्त सरित्स्त्विवोदधिः ॥२॥ प्रथम श्लोकका ज्ञावार्थ ऊपर लिख आएहै, दूसरे श्लोकका ज्ञावार्थ यह है, कि समुद्रमें सर्व नदीयां समा सक्ती है, परंतु समुद्र किसीज्ञी एक नदीमे नही समा सक्ता है, तैसे सर्व मत नदीयां समान है, वेतो सर्व स्याद्वाद समुद्ररूप तेरे मतमे समा सक्ते है, परंतु तेरा स्याद्वाद समुद्ररूप मत किसी मतमेंज्ञी संपूर्ण नही समा सक्ता है, ऐसेहीश्रीहरिज्नद्रसूरिजी जो जातिके ब्राह्मण और चित्रकूटके राजाके प्रोहित थे और वेद वेदांगादि चौहह विद्याके पारगामी थे, तिनोने जैनकी दीक्षालेके १४४४ ग्रंथ रचेहै, तिनोनेज्ञी उपदेशपद षोम्हशकादि प्रकरणोमे सिद्धसेन दिवाकरकी तरेही लिखाहै तथा श्री जिनधर्मी हुआ पीछे जानाहै, जि

सने शैवादि सकल दर्शन और वेदादि सर्व मतों के शास्त्र ऐसे पंडित धनपालने जोके भोजराजा की सभामें मुख्य पंडित था, तिसने श्री ऋषभदेवकी स्तुतिमें कहाहै, पावंति जमं असमंजसावि, वयणेहिं जेहि पर समया, तुह समय महो अहिणो, ते मंदाबिंदु निस्संदा ॥ १ ॥ अस्यार्थः ॥ जैनमतके विना अन्य मतके असमंजस वचनरूप शास्त्र जो जगमें यशको पावे है जैनसें वचनोसें वे सर्व वचन तेरे स्याद्वादरूप महोदधि के अमंद बिंदु भडके गए हुएहै. इत्यादि सैकडो चार वेद वेदांगादिके पाठीयोनें जैनमतमें दीक्षा लीनीहै, क्यातन सर्व पंडितोकों बौधायनादि शास्त्र पडते हुआंको नही मालुम पडा होगा के बौधायनादि शास्त्र जैनमतके वचनोसें रचे गये है, वा जैन मत बौधायनादि शास्त्रोंसें रचा गया

और किसी कालमे न्यून हो जाता है इस वास्ते थोमा और वमा मत देखके थोमे मतको वमेसे रचा मानना ये अनुमान सच्चा नही है; भट्ट मे क्समुलरने यह जो अनुमान करके, अपने पुस्तक मे लिखाहै कि वेदोंके छंदोभाग और मंत्रभागके रचेको २९०० वा ३१०० सौ वर्ष हुएहै; तो फेर बौधायनादि शास्त्र बहुत पुराने रचे हुए क्योंकर सिद्ध होवेंगे; इस वास्ते अपने मनकल्पित अनुमानसे जो कल्पना करनी सो सर्व सत्य नहीहो शक्ती है, इस वास्ते अन्य मतोमें जो ज्ञान है सो सर्व जैन मतमे है, परंतु जैनमतका जो ज्ञानहै सो किसी मतमे सर्व नही है; इस वास्ते जैन मतके द्वादशांगोकेही किंचित वचन लेकेलोकोने मनकल्पित उसमे कुछ अधिक मिलाके मत रच लीनेहै; हमारे अनुमानसेंतो यही सिध्ध होता है.

प्र. १४४–कोइ युरोपीयन विद्वान् ऐसे कहताहै कि बौध्मतके पुस्तक जैनमतसें चढतेहै ?

उ.–जेकर श्लोक संख्यामे अधिक होवे अथवा गिनतिमें अधिक होवे अथवा कवितामें अधिक होवे तवतो अधिकता कोइ माने तो हमारी कुछ हानि नहीहै, परंतु जेकर ऐसें मानना होवेके बौद्ध पुस्तकोमें जैन पुस्तकोंसे धर्मका स्वरूप अधिक कथन करा है, यह मानना विलकुल भूल संयुक्त मालुम होताहै, क्योंकि जैन पुस्तकोंमें जैसा धर्मका रूप और धर्म नीतिका स्वरूप कथन कराहै, वैसा सर्व डुनीयांके पुस्तकोंमें नही है.

प्र. १४५–जैनके पुस्तक वहुत थोमे है, और वौधमतके पुस्तक वहुत है, इस वास्ते अधिकता है ?

और किसी कालमे न्यून हो जाता है इस वास्ते थोफा और वमा मत देखके थोमे मतको वमेसे रचा मानना ये अनुमान सच्चा नही है; भट्ट मे कसमुलरने यह जो अनुमान करके, अपने पुस्तक मे लिखाहै कि वेदोंके छंदोभाग और मंत्रभागके रचेको २९०० वा ३१०० सौ वर्ष हुएहै; तो फेर बौधायनादि शास्त्र बहुत पुराने रचे हुए क्योंकर सिद्ध होवेंगे, इस वास्ते अपने मनकल्पित अनुमानसे जो कल्पना करनी सो सर्व सत्य नहीहो शक्ती है, इस वास्ते अन्य मतोमे जो ज्ञान है सो सर्व जैन मतमे है, परंतु जैनमतका जो ज्ञानहै सो किसी मतमे सर्व नही है; इस वास्ते जैन मतके द्वादशांगोकेही किंचित वचन लेकेलोकोने मनकल्पित उसमें कुछ अधिक मिलाके मत रच लीनेहै; हमारे अनुमानसेंतो यही सिध्ध होता है.

प्र. १४४—कोइ युरोपीयन विद्वान् ऐसे कहताहै कि बौध्मतके पुस्तक जैनमतसें चढतेहै ?

उ.—जेकर श्लोक संख्यामे अधिक होवे अथवा गिनतिमें अधिक होवे अथवा कवितामें अधिक होवे तबतो अधिकता कोइ माने तो हमारी कुछ हानि नहीहै, परंतु जेकर ऐसें मानना होवेके बौद्ध पुस्तकोमें जैन पुस्तकोंसें धर्मका स्वरूप अधिक कथन करा है, यह मानना बिलकुल भूल संयुक्त मालुम होताहै, क्योंकि जैन पुस्तकोंमें जैसा धर्मका रूप और धर्म नीतिका स्वरूप कथन कराहै, वैसा सर्व दुनीयांके पुस्तकोंमें नही है.

प्र. १४५—जैनके पुस्तक बहुत थोमे है, और वौधमतके पुस्तक बहुत है, इस वास्ते अधिकता है ?

उ.—संप्रति कालमें जो जैनमतके पुस्तकहै वे सर्व किसी जैनीनेभी नही देखेहै, तो यूरोपी-यन विद्वान कहांसे देखे; क्योंकि पाटन और जेसलमेरमें ऐसे गुप्त भंडार पुस्तकोंके है कि वे किसी इंग्रेजनेभी नही देखे है, तो फेर पूर्वोक्त अनुमान कैसें सत्य होवे.

प्र. १४६—जैनमतके पुस्तक जो जैनी रखते है सो किसीकों दिखाते नही है, इसका क्या कारण है ?

उ.—कारणतो हमकों यह मालुम होताहै कि मुसलमानोंकी अमलदारीमें मुसलमानोने बहुत जैनमतोपरि जुल्म गुजारा था, तिसमें सैंकडो जैनमतके पुस्तकोंके भंडार बाल दीये थे, और हजारो जैनमतके मंदिर तोडके मसजिदे बनवा दीनी थी. कुतब दिल्ली अजमेर जुनागढके

किलेमें प्रन्नास पाटणमें रांदेर, न्नरूचमें इत्यादि बहुत स्थानोमें जैनमंदिर तोमके मसजिदो बनवाइ हुइ खमी है, तिस दिनके मरे हुए जैनि किसीकोन्नी अपने पुस्तक नही दिखाते है, और गुप्त न्नंमारोंमे बंध करके रख गेमेहै.

प्र, १४७–इस कालमे जो जैनी अपने पुस्तक किसीकों नही दिखातेहै, यह काम अछा है वा नही ?

उ.–जो जैनी लोक अपने पुस्तक बहुत यत्नसें रखतेहै यहतो बहुत अछा काम करते है, परंतु जैसलमेरमें जो न्नंमारके आगे पथ्थरकी न्नीत चिनके न्नंमार बंध कर गेमा है, और कोइ उसकी खबर नही लेता है, क्या जाने वे पुस्तक मट्टी हो गयेहैके शेप कुछ रह गयेहै, इस हेतुसें तो हम इस कालके जैन मतीयोंको बहुत

नालायक समझते है.

प्र. १४८—क्या जैनी लोकोंके पास धन नहीहै, जिससें वे लोक अपने मतके अति उत्तम पुस्तकोंका उद्धार नही करवाते है ?

उ.—धनतो बहुतहै, परंतु जैनी लोकोंकी दो इंद्रिय बहुत जबरदस्त हो गइहै, इस वास्ते ज्ञान जंमारकी कोइज्ञी चिंता नही करताहै.

प्र. १४९—उ दोनो इंद्रियो कौनसी है जो ज्ञानका उद्धार नही होने देती है?

उ.—एकतो नाक और दुसरी जिव्हा, कयोकि नाकके वास्ते अर्थात् अपनी नामदारीके वास्ते लाखों रूपइये लगाके जिन मंदिर बनवाने चले जातेहै, और जिव्हाके वास्ते खानेमे लाखो रूपइये खरच करतेहै, चूरमेआदिकके लडुयोकी खबर लीये जातेहै, परंतु जीर्णजंडारके उद्धार

करणेकी वाततो क्या जाने, स्वप्नमेंभी करते हो- वेंगेके नही.

प्र. १५०–क्या जिन मंदिर और साहम्मि वछल करनेमें पापहै, जो आप निषेध करतेहो?

उ.–जिन मंदिर वनवानेका और साह- म्मिवछल करनेका फलतो स्वर्ग और मोक्षकाहै, परंतु जिनेश्वर देवनेतो ऐसे कहाकि जो धर्मक्षेत्र विगमता होवे तिसकी सार संभाल पहिले कर- नी चाहिये; इस वास्ते इस कालमें ज्ञान भंमार विगमताहै. पहिले तिसका उद्धार करना चाहिये. जिन मंदिरतो फेरभी वन शकतेहै, परंतु जेकर पुस्तक जाते रहेगे तो फेर कोन वना सकेगा.

प्र. १५१–जिन मंदिर वनवाना और सा- हम्मिवछल करना, किस रीतका करनां चाहिये?

उ.–जिस गामके लोक धनहीन होवें, जिन

मंदिर न बना सकें, और जिन मार्गके नक्त होवे, तिस जगे आवश्य जिन मंदिर करानां चाहिये, और श्रावकका पुत्र धनहीन होवे तिसकों किसी का रोजगारमें लगाके तिसके कुटुंबका पोषणहोवे ऐसे करे, तथा जिस काममें सीदाता होवे तिसमे मदत करे. यह साहम्मिवछलहै, परंतु यह न समऊनांके हम किसी जगे जिन मंदिर बनानेकों आर बनिये लोकोंके जिमावने रूप साहम्मिवछलका निषेध करतेहै, परंतु नामदारीके वास्ते जिन मंदिर बनवानेमें अल्प फल कहते है, और इस गामके बनीयोने उस गामके वनियोंकों जिमाया और उस गामवालोंने इस गामके बनियोंकों जिमाया, परंतु साहम्मिकों साहाय्य करनेकी बुद्धिसें नही, तिसकों हम साहम्मिवछल नही मानते है, किंतु गधे खुरकनी मानते है.

प्र. १५९–जैनमततो तुमारे कहनेसें हमको वहुत उत्तम मालुम होताहै, तो फेर यह मत्त वहुत क्यो नही फैलाहै ?

उ.–जैनमतके कायदे ऐसे कठिन है कितिन उपर अल्प सत्ववाले जिव वहुत नही चल सक्तेहै. गृहस्थका धर्म और साधुका धर्म वहुत नियमोंसें नियंत्रितहै, और जैनमतका तत्व तो वहुत जैन लोकभी नही जान सक्तेहै, तो अन्य मतवालोंको तो वहुतही समझना कठिनहै, बौद्ध मतके गोविंदआचार्यनें भरुचमें जैनाचार्यसे चरचामें हार खाइ, पीछे जैनके तत्व जानने वास्ते कपटसें जैनकी दीक्षा लीनी. कितनेक जैनमतके शास्त्र पढके फेर बौद्ध वन गया, फेर जैनाचार्यो के साथ जैनमतके खंडन करनेमें कमर बांधके चरचा करी, फेरभी हारा, फेर जैनकी दीक्षा

			सर्व वस्तु स्वरूप करके अ स्तिरूप है और पररू करके नास्तिरूप है ऐस कथन है
ज्ञान प्र वाद पूर्व ५	एक करोड पद १००००००० एक पद न्यून	१६ हाथी प्रमाण.	पाचो ज्ञान मति आदि तिनका महा बिस्तारसें कथन है
सत्य प्र वाद पूर्व ६	एक करोड पद १००००००० छ पद अधिक	३२ हाथी प्रमाण	सत्य सयम वचन इन ती नोका बिस्तारसें कथन है
आत्मप्र- वादपूर्व ७	छव्वीस करोड पद. २६०००००००	६४ हाथी प्रमाण.	आत्मा जीव तिसका सा- तसौं ७०० नयके मतोंसें स्वरूप कथन करा है
कर्म्म प्र वाद पूर्व ८	एक करोड अ स्सी हजार १००८००००	१२८ हाथी प्रमाण.	ज्ञानावरणीयादि अष्ट कर्मका प्रकृति स्थिति अनुभावप्रदेश दिसें स्वरूपका कथनकराहै
प्रत्या ख्यान प्रवाद	चोराशी लाख पद. ८४०००००	२५६ हाथी प्रमाण.	प्रत्याख्यान त्यागने यो- ग्य वस्तुयोका और त्या गका बिस्तारसें कथन क-

१			रा है
विद्यानुवादपूर्व १०	एक क्रोड दश लाख पद ११००००००	५१२ हाथी प्रमाण.	अनेक अतिशयवंत चमत्कार करनेवाली अनेक विद्यायोंका कथन है,
अवध्य पूर्व ११	छव्वीस करोड पद. २६००००००	१०२४ हाथी प्रमाण	जिसमें ज्ञान, तप, संयमादिका शुभ फल और सर्व प्रमादादि पापोंका अशुभ फल कथन करा है.
प्राणायु पूर्व १२	एक करोड पंचाश लाख पद १५००००००	२०४८ हाथी प्रमाण	पाच इंद्रिय और मनबल, वचनबल, कायाबल, और उच्छ्वास निःश्वास और आयु इन दशो प्राणाका जहा विस्तारसें स्वरूप कथन करा है.
क्रिया विशाल पूर्व १३	नव करोड पद ९००००००	४०९६ हाथी प्रमाण शाहीसें लिखा जावे	जिसमें कायक्यादि क्रिया वा संयमाक्रिया छंदक्रियादि क्रियायोंका कथन है.

मुसल्मान मत ९	मह म्मद	एक ईश्वर	अनेक	पाठक	फकीर
शकर मत १०.	शकर	एक ब्रह्म	आनंदगिरी आदि	शंकरभाष्यादि पाठक	गिरिपुरि भारती आदि
रामानुज मत ११	रामानुज	एक ईश्वर रामचंद्र	अनेक	रामानुज मत पाठक	साधु वैश्नव
वलभ मत १२	वल्लभाचार्य	एक ईश्वर कृष्ण	अनेक	वल्लभ मत पाठक	तिस मतके साधु नहि.
कवीरमत १३.	कवीर	एक ईश्वर	अनेक	तन्मत पाठक	गृहस्थ वा साधु
नानक मत १४.	नानक	एक ईश्वर	अनेक	ग्रंथ पाठक	उदासी साधु
दादूमत १५	दादू	एक ईश्वर	सुंदर दासादि	तत् [illegible]	[illegible]
गोरख मत १६.	गोरख	एक ई[illegible]		तत् [illegible]	

स्वामीनारायण १७	सामी नारायण	एकईश्वर	स्त्री और परिग्रह धारी	तत् ग्रंथ पाठक	रंगे वस्त्रवाले धोले वस्त्रवाले
दयानदमत १८	दयानद	एक ईश्वर	अस्ति	तन्मतं पाठक	साधु

इत्यादि इस तरे मतधारीयोने पच परमेष्टीकी जगे पांच २ वस्तु कल्पना करी है, इस वास्ते पंच परमेष्टीके विना अन्य कोइ सृष्टिका कर्त्ता सर्वज्ञ वीतराग ईश्वर नही है, नि.केवल लोकांको अज्ञान भ्रमसें सृष्टिकर्त्ताकी कल्पना उत्पन्न होती है, पूर्व पक्ष कोइ प्रश्न करे के जेकर सर्वज्ञ वीतराग ईश्वर जगतका कर्त्ता नहीहै, तो यह जगत अपने आप कैसे उत्पन हुआ, क्योंकि हम देखतेहै कर्त्ताके विना कुछभी उत्पन्न नही होता है, जैसें घटीयालादि वस्तु. तिसका

उत्तर-हे परीक्षको ! तुमको हमारा अभिप्राय यथार्थ मालुम पमता नही है, इस वास्ते तुम कर्त्ता ईश्वर कहतेहो, जो इस जगतमें बनाइ हुइ वस्तुहै, तिसका कर्त्ता तो हमभी मानतेहै, जैसें घट, पट, शराव, उदंचन, घमियाल, मकान, हाट, हवेली, संकल, जंजीरादि परंतु आकाश, काल, स्वभाव, परमाणु, जीव इत्यादि वस्तुयां किसीकी रची हुइ नही है, क्योंकि सब विद्वानोका यह मतहैके जो वस्तु कार्यरूप उत्पन्न होती है तिसका उपादान कारण अवस्य होनां चाहिये. विना उपादानके कदापि कायकी उत्पत्ति नही होती है, जो कोइ विना उपादान कारणके वस्तुकी उत्पत्ति मानता है, सो मूर्ख, प्रमाणका स्वरूप नही जानता है; तिसका कथन कोइ महा मूढ मानेगा, इस वास्ते आकाश १ आत्मा २

काल ३ परमाणु ४ इनका उपादान कारण कोइ नही है, इस वास्ते यें चारो वस्तु अनादि है. इनका कोइ रचनेवाला नही है, इस्सें जो यह कहता है कि सर्व वस्तुयों ईश्वरने रचीहै सो मिथ्याहै, अब शेष वस्तु पृथ्वी १ पानी २ अग्नी ३ पवन ४ वनस्पति ५ चलने फिरने वाले जीव रहे है, तथा पृथ्वीका भेद नरक, स्वर्ग, सूर्य, चंद्र, ग्रह, नक्षत्र, तारादि है, ये सर्व जड चैतन्यके उपादानसे बने है, जे जीव और जड परमाणुओंके संयोगसें वस्तु बनीहै, वे ऊपर पृथ्वी आदि लिख आयेहै, ये पृथ्वी आदि वस्तु प्रवाहसें अनादि नित्यहै, और पर्याय रूप करके अनित्यहै, और यें जड चैतन्य अनंत स्वाभाविक शक्तिवाले है, वे अनंत शक्तियां अपने २ कालादि निमित्तांके मिलनेसें प्रगट होतीहै, और इस ज-

गतमें जो रचना पिछे हूइहै, और जो हो रहीहै, और जो होवेगी, सर्व पांच निमित्त उपादान कारणोंसें होतीहै, वे कारण येहहै, काल १ स्वभाव २ नियति ३ कर्म ४ उद्यम ५; इन पांचोके सिवाय अन्य कोइ इस जगतका कर्त्ता और नियंता ईश्वर किसी प्रमाणसें सिद्द नही होताहै, तिसकी सिद्धीका खंम्न पूर्वे पहिले सव लिख आइहै, जैसे एक वीजमें अनत शक्तियांहै,वृक्षमे जितने रंग विरंगे मूल १ कंद २ स्कंध ३ त्वचा ४ शाखा ५ प्रवाल ६ पत्र ७ पुष्प ८ फल ९ वीज १० प्रमुख विचित्र रचना मालुम होतीहै, सो सर्व बीजमें शक्ति रूपसें रहतीहै, जब कोइ वीजको जालके भस्म करे तव तिस विजके परमाणुयोमें पूर्वोक्त सर्व शक्तियां रहतीहै, परंतु विना निमित्तके एकभी शक्ति प्रगट नही होतीहै,

जेकर बीजमें शक्तियां न मानीये तबतो गेहूंके बीजसें आंब और बंबुल मनुष्य, पशु, पक्षी आदिभी उत्पन्न होने चाहिये. इस वास्ते सर्व वस्तुयोंमे अपनी२ अनंत शक्तियांहै. जैसा २ निमित्त मिलताहै तैसी २ शक्ति वस्तुमें प्रगट होतीहै, जैसें बीज कोठिमें पड़ाहै तिसमें वृक्षके सर्व अवयवोंके होनेकी शक्तियांहै, परंतु बीजके काल विना अंकुर नही हो शक्ताहै; कालतो वृष्टी रुतुकाहै, परंतु भूमि और जलके संयोग विना अंकुर नही हो शक्ताहै, काल भूमि जलतो मिलेहै परंतु विना स्वभावके कक्कर बोवेतो अंकुर नही होवेहै. बीजका स्वभाव १ काल २ भूमि ३ जलादितो मिलेहै, परंतु बीजमें जो तथा तथा भवन अर्थात् होनेवाली अनादि नियतिके विना बीजतैसा लंबा चौड़ा अंकुर निर्विघ्नसें नही दे

जीव असंख उत्पन्न होतेहै, और पुर्वले नाश होतेहै. तिन असंख जीवांके शरीर मिलने और विंछुरनेसे पृथ्वी तैसीही रहेगी. जैसे नदीका पाणी अगला २ चला जाता है; और नवीन नवीन आनेसे नदी वैसीही रहती है, इस वास्ते घटरूपकार्य समान पृथ्वी नही है, इस वास्ते पृथ्वी सदाही रहेगी और तिसके उपर जो रचना है; सो पुर्वोक्त पांच कारणोसें सदा होती रहेगी. इस वास्ते पृथ्वी अनादि अनंत काल तक रहगी, इस वास्ते पृथ्वीका कर्त्ता ईश्वर नही है, और जो कितनेक लोकें जीव मनुष्य १ पशु २ पृथ्वी ३, पवन ४, वनस्पतिकों तथा चंद्र, सूर्यकों देखके और मनुष्य पशुयोके शरीरकी हड्डीयांकी रचना आंखके पडदे खोपरीके टुकडे नशा जालादि शरीरोंकी विचित्र रचना देखके हेरान होतेहै, जब कुछ

आगा पीछा नही सूजताहै, तब हार कर यह कह देतेहै, यह रचना ईश्वरके विना कौन कर सक्ता है; इस वास्ते ईश्वर कर्त्ता २ पुकारते है; परंतु जगत कर्त्ता माननेसें ईश्वरका सत्यानाश कर देते है, सो नही देखतेहै. काणी हथनी एक पासेकी ही वेलमीयां खातिहै, परंतु हे भोले जीव जेकर तेने अष्ट कर्मके १४८ एकसौ अम्तालीस भेद जाने होते, तो अपने विचारे ईश्वरकों काहेको जगत कर्त्ता रूप कलंक देके, तिसके ईश्वरत्वकी हानी करता. क्योंकि जो जो कल्पना भोले लोकोमे ईश्वरमें करी है सो सो सर्व कर्मद्वारा सिद्ध होती है, तिन कर्मोंका स्वरूप संक्षेप मात्र यहां लिखते है, जैकर विषेश करके कर्म स्वरुप जाननेकी इछा होवे तदा षटकर्म ग्रंथ १ कर्म प्रकृति प्राकृत २ पंचसंग्रह ३ शतक ४ प्रमुख ग्रंथ

ज्ञानावरणीय १ दर्शनावरणीय २ वेदनीय ३ मोहनीय ४ आयु ५ नाम ६ गोत्र ७ अंतराय ८ इनमेसे प्रथम ज्ञानावरणीयके पांच भेदहै; मतिज्ञानावरणीय १ श्रुतज्ञानावरणीय २ अवधिज्ञानावरणीय ३ मनःपर्यायज्ञानावरणीय ४ केवलज्ञानावरणीय ५. तहां पांच इंद्रिय और छठा मन इन छहो द्वारा जो ज्ञान उत्पन्न होवे तिसका नाम मतिज्ञान है. तिस मतिज्ञानके तीनसौ छत्तीस ३३६ भेदहै. वे सर्व कर्मग्रंथकी वृत्तिसें जानने. तिन सर्व ३३६ भेदांका आवरण करनेवाला मतिज्ञानावरण कर्मका भेदहै, जिस जीवके आवरण पतला हुआहै तिस जीवकी बहुत बुद्धि निर्मलहै; जैसें जैसे आवरणके पतलेपणेकी तारतम्यताहै तैसें तैसें जीवांमे बुद्धिकी तारतम्यताहै. यद्यपि मतिज्ञान मतिज्ञानावरणके क्षयोप

शमसें होताहै तोन्नी तिस क्षयोपशमके निमित्त मस्तक, शिर, विशाल मस्तकमे न्नेजा, चरबी, घीकास, मांस, रुधिर, निरोग्य हृदय, दिल निरुपद्रव, और सूंठ, ब्राह्मी वच, घृत, दूध, साकर, प्रमुख अछी वस्तुका खानपानादिसें अधिक अधिकतर मतिज्ञानावरणके क्षायोपशमके निमित्त है; और शील संतोष महा व्रतादि करणी, और पठन करानेवाला विद्यावान् गुरू, और देश काल श्रद्धा, उत्साह परिश्रमादि ये सर्व मतिज्ञानावरणके क्षयोपशमं होनेके कारणहै. जैसें जैसें जीवांकों कारण मिलतेहै तैसी तैसी जीवांकी बुद्धि होतीहै इत्यादि विचित्र प्रकारसें मतिज्ञानावरणीका न्नेदहै. इति मतिज्ञानावरणी १. दूसरा श्रुतज्ञानावरण श्रुतज्ञानका आवरण श्रुतज्ञान, तिसकों कहतेहै, जो गुरूपासे सुनके ज्ञान होवे

और जिसके बलसें अन्य जीवांकों कथन करा जावे, तिसके निमित्त पूर्वोक्त मतिज्ञानवाले जानने, क्योंके ये दोनो ज्ञान एक साथही उत्पन्न होतेहै, परंतु इतना विशेश है; मतिज्ञान वर्त्तमान विषयिक होता है. और श्रुतज्ञान त्रिकाल विषय होताहै; श्रुतज्ञानके चौदह १४ तथा वीस भेद २० है, तिनका स्वरुप कर्मग्रंथसें जानना. पठन पाठनादि जो अक्षरमय वस्तुका ज्ञान है, सो सर्व श्रुतज्ञान है; तिसका आवरण आछादन जो है, जिसकी तारतम्यतासें श्रुतज्ञान जीवांको विचित्र प्रकारका होताहै, तिसका नाम श्रुतज्ञानावरणीय है. इसकै क्षायोपशमके वेही निमित्तहै, जौनसें मतिज्ञानके है; इति श्रुतज्ञानावरण २. तीसरा अवधिज्ञानका आवरण अवधिज्ञानावरणीय ३. ऐसेंही मनःपर्यायज्ञानावरण ४. केवलज्ञानावरण

५, इन पांचो ज्ञानोमेंसें पिछले तीन ज्ञान इस कालके जीवांकों नहीहै; सामग्री और साधनके अभावसें. इस वास्ते इनका स्वरूप नंदी आदी सिद्धांतोसे जानना ये पांच भेद ज्ञानावरण कर्म केहै. यह ज्ञानावरणकर्म जिस कर्त्तव्योंसें बांधता है, अर्थात् उत्पन्न करके अपने पाचो ज्ञान शक्ति-यांका आवरण कर्त्ता है सो येहहै, मति, श्रुत प्र मुख पांच ज्ञानकी १ तथा ज्ञानवंतकी २ तथा ज्ञानोपकरण पुस्तकादिकी ३ प्रत्यनी कता अर्थात् अनिष्टपणा, प्रतिकूलपणा करे, जैसें ज्ञान और ज्ञानवंतका बुरा होवे तैसें करे; १ जिस पासों पढा होवे तिस गुरुका नाम न बतावे, तथा जानी हूइ वस्तुको अजानी कहे २; ज्ञानवंत तथा ज्ञा-नोपकरणका अग्निशस्त्रादिकसें नाश करे ३; तथा ज्ञानवंत ऊपर तथा ज्ञानोपकरण ऊपर प्रद्वेष अं-

य १. नेत्र वर्जके शेष चारो इंद्रियोंको अचक्षु द र्शन कहते है, तिनके सुनने, सूंघने, रस लेने, स्पर्श पिछाननेका जो सामान्य ज्ञानहै सो अचक्षु दर्शनहै; चारो इंद्रियोंकी शक्तिका आछादन करने- वाला जो कर्म है तिसको अचक्षु दर्शन कहते है, इसके क्षयोपशम होनेमे अंतरंग वहिरंग विचित्र प्रकारके निमित्तहै. तिन निमित्तोंद्वारा इस कर्म- का क्षय उपशम जैसा जैसा जीवांके होता है तैसी तैसी जीवोंकी चार इंद्रियकी स्व स्व विष- यमे शक्ति प्रगट होती है, इति अचक्षुदर्शनावर- णी २. अवधि दर्शनावरणीय और केवलदर्शना वरणीयका स्वरूप शास्त्रसें देख लेनां; क्योंकि सामग्रीके अन्नावसे ये दोनो दर्शन इस कालक्षे- त्रके जीवांको नही है, एवं दर्शनावरणीयके चार ज्ञेद हुए ४. पांचमा ज्ञेद निद्रा जिसके उदयसें

सुखें जागे सो निद्रा १ जो बहुत हलाने चलानेसें जागे सो निद्रा निद्रा २ जो बैठेकों नींद आवे सो प्रचला ३ जो चलतेकों आवे सो प्रचला प्रचला ४ जो नींदमें उठके अनेक काम करे नींदमे शरीरमे बल बहुत होवे है, तिसका नाम स्त्यानर्द्धी निद्राहै ५ पांच इन्द्रियोंके ज्ञानमे हानि करती है, इस वास्ते दर्शनावरणीयकी प्रकृति है, एवं ए भेद दर्शनावरणीय कर्मके हुए, इस कर्मके बांधनेके हेतु ज्ञानावरणीयकी तरे जानने, परं ज्ञानकी जगे दर्शन पद कहना, दर्शन चक्षु अचक्षु आदि, दर्शनी साधु आदि जीव, तिनकी पांच इंद्रियाका बुरा चिंते, नाश करे अथवा सम्मति तत्वार्थ द्वादशार नयचक्रवाल तर्कादि दर्शन प्रभावक शास्त्रके पुस्तक तिनका प्रत्यनीकपणादि करेतो दर्शनावरणीय कर्मका बंध करे,

इति दुसरा कर्म २.

अथ तीसरा वेदनीय कम तिसकी दो प्रकृतिहै; साता वेदनीय १ असाता वेदनिय २ साता वेदनीयसे शरीरको अपने निमित्तद्वारा सुख होताहै, और असाता वेदनीयके उदयसे दुःख प्राप्त होता है. एव दो भेदोके बांधनेके कारण प्रथम साता वेदनीयके बंध करणेके कारण गुरु अर्थात् अपने माता पिता धर्माचार्य इनकी भक्ति सेवा करे १ क्षमा अपने सामर्थके हुए दुसरायोंका अपराध सहन करना २ परजीवांको दुखी देखके तिनके दुःख मेटनेकी वांछा करे ३ पंचमहाव्रत अनुव्रत निर्दूषण पाले ४ दश विध चक्रवाल समाचारी संयम योग पालनेसें ५ क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति अरति, शोक, भय, जुगुप्सा इनके उदय आया इनको निष्फल करे ६ सूपात्र

दान, अन्नय दान, देता सर्व जीवां उपर उपकार करे; सर्व जीवांका हित चिंतन करे ७ धर्ममे स्थिर रहे, मरणांत कष्टकेन्नी आये, धर्मसे चलायमान न होवे, बाल वृद्ध रोगीकी वैयावृत्त करतां धर्ममे प्रवर्त्ततां सहाय करे, चैत्य जिन प्रतिमाकी अठी न्नक्ति करतां सराग संयम पाले; देशव्रतीपणा पाले, अकाम निर्जरा अज्ञान तप करें, सौच्य सत्यादि सुंदर अंतःकरणकी वृत्ति प्रवर्त्तावे तो साता वेदनीय कर्म बांधे, इति साता वेदनीयके बंध हेतु कहे १ इनसें विपर्यय प्रवर्त्ते तो असाता वेदनीय बांधे २ इति वेदनीय कर्म स्वरुप ३

अथ चोथा मोहनीय कर्म तिसके अठावीस न्नेद है, अनंतानुबंधी क्रोध १ मान २ माया ३ लोन्न ४, अप्रत्याख्यान क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोन्न ८, प्रत्याख्यानावरण क्रोध ए मान १० माया

११ लोभ १२, संज्वलका क्रोध १३ मान १४ माया १५ लोभ; १६ हास्य १७ रति १८ अरति १९शोक २० भय २१ जुगुप्सा २२ स्त्रीवेद २३ पुरुषवेद २४ नपुंसकवेद २५ सम्यक्त मोहनीय २६ मिश्र मोहनीय २७ मिथ्यात्व मोहनीय २८ अथ इनका स्वरूप लिखतेहै; प्रथम अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ जां तक जीवे तां तक रहे; हटे नही तिनमेंसें अनंतानुबंधी क्रोध तो ऐसाकि जाव जीव सुधी क्रोध न छोडे, अपराधी कितनी आधीनगी करे तोभी क्रोध न छोडे,यह क्रोध ऐसाहै जैसे पर्वतका फटना फेर कदापि न मिले, मान पथ्थरके स्तंभ समान किंचित मात्रभी ननमे, माया कठिन वांसकी जड समान सूधी न होवे, लोभ कर्मिके रंग समान फेर उतरे नही, ये चारो जिसके उदयमे होवे सो जीव मरके न-

रकमें जाता हे; और इस कषायके उदयमें जी-
वांकों सच्चे देवगुरू धर्मकी श्रद्धारूप सम्यक्त नही
होता है, ४ दूसरा अप्रत्याख्यान कषाय तिसकी
स्थिति एक वर्षकी है एक वर्ष तक क्रोध मान
माया लोभ रहे तिनमे क्रोधका स्वरूप पृथ्वीके
रेखा फाटने समान वडे यतनसें मिले, मान हा-
डकें स्तंभे समान मुश्केलसें नमे, माया मिंढेके
सींगके वल समान सिधा कठनतासें होवे, लोभ
नगरकी मोरीके कीचडके दाग समान, इस क-
षायके उदयसे देश वृतीपणा न आवे और मरके
पशु तीर्यंचकी गतिमे जावे ८ तीसरी प्रत्याख्या
नावरण कषाय तिसकी स्तिथि चार मासकी है.
क्रोध वालुकी रेखा समान, मान काष्टके स्तंभे
समान, माया वैलके मूत्र समान वांकी, लोभ
गाडीके खंजन समान, इसके उदयसे शुद्धसाधु

नही होता है ऐसा कषायवाला मरके मनुष्य होताहै १२ चौथी संज्वलनकी कषाय, तिसकी स्थिति एक पक्षकी. क्रोध पाणीकी लकीर समान, मान वांसकी शींखके स्तंभे समान, माया, वांसकी छिल्लक समान, लोभ हलदीके रंग समान, इसके उदयसे वीतराग अवस्था नही होती है. इस कषाइवाला जीव मरके स्वर्गमें जाताहै १६ जिसके उदयसें हासी आवे सो हास्य प्रकृति १७ जिसके उदयसे चित्तमे निमित्त निर्निमित्तसें रति अंतरमें खुशी होवे सो रति १८ जिसके उदयसें चित्तमें सनिमित्त निर्निमित्तसें दिलगीरी उदासी उत्पन्न होवें सो अरति प्रकृति १९ जिसके उदयसें इष्ट विजोगादिसें चित्तमें उद्वेग उत्पन्न होवे सो शोक मोहनीय प्रकृति २० जिसके उदयसे सात प्रकारका भय उत्पन्न होवे सो भय

मोहनीय २१ जिसके उदयसे मलीन वस्तु देखी सूग उपजे सो, जुगुप्सा मोहनीय २२ जिसके उदयसें स्त्रीके साथ विषय सेवन करनेकी इच्छा उत्पन्न होवे, सो पुरुषवेद मोहनीय २३ जिसके उदयसें पुरुषके साथ विषय सेवनेकी इच्छा उत्पन्न होवे, सो स्त्री वेद मोहनीय २४ जिसके उदयसें स्त्रीपुरुष दोनोंके साथ विषय सेवनेकी अभिला-षा उत्पन्न होवे, सो नपुंसकवेद मोहनीय. २५ जिसके उदयसे शुद्ध देव गुरु, धर्मकी श्रद्धा न होवे सो मिथ्यात्व मोहनीय २६ जिसके उदयसें शुद्ध देव गुरु धर्म अर्थात् जैनमतके ऊपर राग-भी न होवे और द्वेषभी न होवे, अन्य मतकीभी श्रद्धा न होवे सो मिश्र मोहनीय २७ जिसके उ-दयसें शुद्ध देव गुरु धर्मकी श्रद्धातो होवे परंतु सम्यक्तमें अतिचार लगावे सो सम्यक्त मोहनीय

२८ इन २८. प्रकृतियोमें आदिकी २५ पच्चीस प्रकृतिको चारित्र मोहनीय कहते है, और ऊपली तीन प्रकृतियोंकों दर्शनमोहनीय कहते है एवं २८ प्रकृतिरुप मोहनीय कर्म चौथा है, अथ मोहनीय कर्मके बंध होनेके हेतु लिखते है. प्रथम मिथ्यात्व मोहनीयके बंध हेतु उन्मार्ग अर्थात् जे संसारके हेतु हिंसादिक आश्रव पापकर्म तिनकों मोक्ष हेतु कहे तथा एकांत नयसे निः केवल क्रिया कष्टानुष्ठानसें मोक्ष प्ररूपे तथा एकांत नयसें निःकेवल ज्ञान मात्रसे मोक्ष कहे ऐसेही एकले विनयादिकसे मोक्ष कहे १ मार्ग अर्थात् अर्हत भाषित सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्ररूप मोक्ष मार्ग तिसमे प्रवर्त्तनेवाले जीवकों कुहेतु, कुयुक्ति, करके पूर्वोक्त मार्गमे भ्रष्ट करे २ देवद्रव्य ज्ञान द्रव्यादिक तिनमें जो भगवानके मंदिर प्रतिमादि

के काम आवे काष्ट, पाषाण, मृत्तीकादिक तथा तिस देहरादिके निमित्त करा हुआ रूपा, सोनादि धन तिसका हरण करे; देहराकी भूमि प्रमुखकों अपनी कर लेवे, देवकी वस्तुसे व्यापार करके अपनी आजीवीका करे तथा देवद्रव्यका नाश करे, शक्तिके हुए देवद्रव्यके नाश करनेवालेको हटावे नही, ये पुर्वोक्त काम करनेवाला मिथ्यादृष्टि होताहै, सो मिथ्यात्व मोहनीय कर्मका बंध करता है; तथा दूसरा हेतु तीर्थंकर केवलीके अवर्णवाद बोले, निंदा करे, तथा भले साधुकी तथा जिन प्रतिमाकी निंदा करे, तथा चतुर्विध संघ साधु साधवी श्रावक श्राविकाका समुदाय तिसकी श्रुतज्ञानकी निंदा अवज्ञाहीलना करता हुआ, और जिन शासनका उड्डाह करता हुआ अयश करता कराता हुआ निकाचित महा मिथ्यात्व

मोहनीय कर्म बांधे. इति दर्शन मोहनीयके बंध हेतु. ॥ अथ चारित्रमोहनीय कर्मके बंध हेतु लिखते है. चारित्र मोहनीय कर्म दो प्रकारका है, कषाय चारित्र मोहनीय १. नोकषाय चारित्र मोहनीय २. तिनमेंसें कषाय चारित्र मोहनीयके १६ सोलां भेदहे, तिनके बंध हेतु लिखते है. अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभमे प्रवर्ते तो सोलाही प्रकारका कषाय मोहनीय कर्म बांधे. अप्रत्याख्यानमे वर्त्ते तो ऊपल्या बांरां कषाय बांधे. प्रत्याख्यानमें प्रवर्त्ते तो ऊपल्या आठ कषाय बांधे, संज्वलनमें प्रवर्त्ते तो चार संज्वलनका कषाय बांधे. इति कषाय चारित्र मोहनीयके बंध हेतु. नोकषाय हास्यादि तिनके बंधहेतु यह है, प्रथम हास्य हांसी करे, भांड कुचेष्टा करे, बहुत बोले तो हास्य मोहनीय कर्म बांधे १ देश देखनेके र-

ससें, विचित्र क्रीमाके रससें, अति वाचाल होनेसें, कामण मोहन टूणा वगेरे करे; कुतुहल करे तो रति मोहनीय कर्म बांधे २ राज्य न्नेद करे, नवीन राजा स्थापन करे परस्पर लमाइ करावे, दूसरायोंकों अरति उच्चाट उत्पन करे, अशुन्न काम करने करानेमें उत्साह करे, और शुन्न कामके उत्साहकों न्नाजे, निष्कारण आर्त्तध्यान करे तो अरति मोहनीय कर्म बांधे ३. परजीवांकों त्रास देवे तो, निदर्य परिणामी न्नय मोहनीय कर्म बाधे ४. परको शोक चिंता संताप उपजावे तपावे तो शोक मोहनीय कर्म बांधे ५ धर्मी साधु जनोंकी निंदा करे साधुका मलमलीनगात्र देखी निंद्रा करे तो जुगुप्सा मोहनीय कर्म बांधे ६, शव्द, रुप, रस, गंध, स्पर्सरूप मनगती विषयमें अत्यंताशक्त होवे डुसरेकी इर्षा करे, माया

मृषा सेवे, कुटिल परिणामी होवे, पर स्त्रीसें भोग करै तो जीव स्त्रीवेद मोहनीय कर्म बांधे ७ सरल होवे, अपनी स्त्रीस उपरांत संतोषी होवे, इर्षा रहित मंद कषायवाला जीव पुरुषवेद बांधे ८ तीव्र कषायवाला, दर्शन उसरे मतवालोंका शील भंग करे, तीव्र विषयी होवे, पशुको घात करे, मिथ्यादृष्ठी जीव नपुंसकवेद बांधे ए. संयमीके उपण दिखावे, असाधुके गुण बोले, कषायकी उदीरणा करता हुआ जीव चारित्र मोहनीय कर्म समुच्चय बांधे, इति मोहनिय कर्म बंध हेतु. यह मोहनीय कर्म मदीराके नशेकी तरें अपने स्वरूपसे भ्रष्ठ कर देताहै. इति मोहनीय कर्मका स्वरूप संक्षेप मात्र पुरा हुआ ४

अथ पांचमा आयुकर्म, तिसकी चारप्रकृति जिनके उदयसें नरक १ तिर्यंच २ मनुष्य ३

देव ४ जवसे खैंचा हुआ जीव जावे है, जैसें चमकपाषाण लोहकों आकर्षण करता है, तिसका नाम आयुकर्म. नरकायु १ तिर्यंचायु २ मनुष्यायु ३ देवायु ४ प्रथम नरकायुके बंध हेतु कहतेहै. महारंज चक्रवर्ती प्रमुखकी रुद्धि जोगनेमें महा मूर्छा परिग्रह सहित, व्रत रहित अनंतानुबंधी कषायोदयवान् पंचेंद्रिय जीवकी हिंसा निशंक होकर करे, मदिरा पीवे, मांस खावे, चौरी करे, जूया खेले, परस्त्री और वेस्या गमन करे; शिकार मारे, कृतघ्नी होवे, विश्वासघाती, मित्र द्रोही, उत्सूत्र प्ररूपे, मिथ्यामतकी महिमा वढावे, कृश्न नील, कापोत लेश्यासें अशुज परिणामवाला जीव नरकायु वाधे १ तिर्यंचकी आयुके बंध हेतु यह है. गूढ हृदयवाला, अर्थात् जिसके कपटकी किसीको खबर न पडे, धूर्त होवे, मुखसें मीठा वोले,

मृषा सेवे, कुटिल परिणामी होवे, पर स्त्रीसें भोग करै तो जीव स्त्रीवेद मोहनीय कर्म बांधे ७ सरल होवे, अपनी स्त्रीस उपरांत संतोषी होवे, इर्षा रहित मंद कषायवाला जीव पुरुषवेद बांधे८ तीव्र कषायवाला, दर्शन दुसरे मतवालोंका शील भंग करे, तीव्र विषयी होवे, पशुको घात करे, मिथ्यादृष्टी जीव नपुंसकवेद बांधे ए. संयमीके दुषण दिखावे, असाधुके गुण बोले, कषायकी उदीरणा करता हुआ जीव चारित्र मोहनीय कम समुच्चय बांधे, इति मोहनिय कर्म बंध हेतु. यह मोहनीय कर्म मदीराके नशेकी तरे अपने स्वरूपसें भ्रष्ठ कर देताहै. इति मोहनीय कर्मका स्वरुप संक्षेप मात्र पुरा हुआ ४

अथ पांचमा आयुकर्म, तिसकी चारप्रकृति जिनके उदयसें नरक १ तिर्यंच २ मनुष्य ३

देव ४ जवसे खैंचा हुआ जीव जावे है, जैसें चमकपाषाण लोहकों आकर्षण करता है, तिसका नाम आयुकर्म. नरकायु १ तिर्यंचायु २ मनुष्यायु ३ देवायु ४ प्रथम नरकायुके बंध हेतु कहतेहै. महारंभ चक्रवर्ती प्रमुखकी ऋद्धि जोगनेमे महा मूर्छा परिग्रह सहित, व्रत रहित अनंतानुबंधी कषायोदयवान् पंचेंद्रिय जीवकी हिंसा निशंक होकर करे, मदिरा पीवे, मांस खावे, चौरी करे, जूया खेले, परस्त्री और वेस्या गमन करे, शिकार मारे, कृतघ्नी होवे, विश्वासघाती, मित्र द्रोही, उत्सूत्र प्ररूपे, मिथ्यामतकी महिमा वढावे, कृष्ण नील, कापोत लेश्यासें अशुभ परिणामवाला जीव नरकायु बांधे १ तिर्यंचकी आयुके बंध हेतु यह है. गूढ हृदयवाला, अर्थात् जिसके कपटकी किसीको खबर न पडे, धूर्त होवे, मुखसें मीठा बोले,

हृदयमें कतरणी रखे, जूठे दूषण प्रकाशे, आर्त्त-ध्यानी इस लोकके अर्थे तप क्रिया करे, अपनी पूजा महिमाके नष्ट होनेके नयसें कुकर्म करके गुरुआदिकके आगे प्रकाशे नही, जूठ बोले, कमती देवे, अधिक लेवे, गुणवानकी इर्षा करै, आर्त्तध्यानी कृश्नादि तीन मध्यम लेश्यावाला जीव तिर्यंच गतिका आयु बांधे. इति तिर्यंचायु ३ अथ मनुष्यायुके बंधहेतु मिथ्यात्व कषायका स्वन्नावही मंदोदयवाला प्रकृतिका नद्रिक धूल रेखा समान कषायोदयवाला सुपात्र कुपात्रकी परीक्षा विना विशेष यश कीर्त्तिकी वांठा रहित दान देवे, स्वन्नावे दान देनेकी तीव्र रुचि होवे, क्षमा, आर्जव, मार्दव, दया, सत्य शौचादिक मध्यम गुणामें वर्त्ते, सुसंबोध्य होवे, देव गुरुका पूजक, पूजाप्रिय कापोत लेश्याके परिणामवाला मनुष्य ति-

थैंचादि मनुष्यायु बांधे ३. अथ देव आयु अविरति सम्यगदृष्टि मनुष्य तिर्यंच देवताका आयु बांधे सुमित्रके संयोगसे धर्मकी रुचिवाला देशविरति सरागसंयमी देवायु बांधे, बालतप अर्थात् दुःख गर्भित, मोहगर्भित वैराग्य करके दुष्कर कष्ट पंचाग्नि साधन रस परित्यागसें, अनेक प्रकारका अज्ञान तप करनेसें निदान सहित अत्यंत रोष तथा अहंकारसें तप करे, असुरादि देवताका आयु बांधे तथा अकाम निर्जरा अजाणपणे नूख, तृषा, शीत, उष्ण रोगादि कष्ट सहनेसें स्त्री अन मिलते शील पाले, विषयकी प्राप्तिके अन्नावसें विषय न सेंवनसे इत्यादि अकाम निर्जरासें तथा बाल मरण अर्थात् जलमें मूब मरे, अग्निसें जल मरे, झंपापातसें मरे, शुन्न परिणाम किंचित्वाला तो व्यंतर देवताका आयु बांधे. आचार्यादिककी अ-

रीर ११ आहारिक शरीर १२ तैजस शरीर १३ कार्मण शरीर १४ ऊदारिकांगोपांग १५ वैक्रियांगोपांग १६ आहारिकांगोपांग १७ ऊदारिकबंधन १८ वैक्रिय बंधन १९ आहारिक बंधन २० तैजस बंधन ११ कार्मण बंधन २१ ऊदारिक संघातन २३ वैक्रिय संघातन २४ आहारिक संघातन २५ तैजस संघातन २६ कार्मण संघातन २७ वज्र रुषभ्न नराच संहनन २८ रुषभ्न नराच संहनन २९ नराच संहनन ३० अर्द्ध नराच संहनन ३१ कीलिका संहनन ३२ छेवर्त्त संहनन ३३ सम च तुरस्र संस्थान ३४ निग्रोध परिमंडल संस्थान ३५ सादिया संस्थान ३६ कुब्ज संस्थाम ३७ वामन संस्थान ३८ हुंडक संस्थान ३९ कृष्ण वर्ण ४० नील वर्ण ४१ रक्त वर्ण ४२ पीत वर्ण ४३ शुक्ल वर्ण ४४ सुगंध ४५ दुर्गंध ४६ तिक्त रस ४७ क-

टुक रस ४८ कषायरस४९ आम्ल रस ५० मधुर रस ५१ कर्कश स्पर्श ५२ मृडु स्पर्श ५३ हलका ५४ नारी ५५ शीत स्पर्श ५६ उश्न स्पर्श ५७ स्निग्ध स्पर्श ५८ रुक्षस्पर्श ५९ नरकानुपूर्वी ६० तिर्यंचानुपूर्वी ६१ मनुष्यानुपूर्वी ६२ देवानुपूर्वी शुन्नविहायगति ६४ अशुन्नविहायगति ६५ पराघात नाम ६६ उत्स्वास ६७ आतप ६८ उद्योत नाम ६९अगुरू लघु ७० तीर्थंकर नाम ७१ निर्माण७२ उपघात नाम ७३ त्रसनाम ७४ बादर नाम ७५ पर्याप्त नाम ७६ प्रत्येक नाम ७७ स्थिर नाम ७८ शुन्न नाम ७९ सुन्नग नाम ८० सुस्वर नाम ८१ आदेय नाभ ८२ यशकीर्ति नाम ८३स्थावर नाम सूक्ष्म नाम ८५ अपर्याप्तनाम ८६ साधारणनाम ८७ अस्थिर नाम ८८ अशुन्न नाम ८९ डुर्नग नाम ९० डुस्वर नाम ९१ अनादेय नाम ९२

अपयश नाम ९३ ये तिरानवे भेद नाम कर्मकेहै अब इनका स्वरूप लिखतेहै. गतिनाम कर्म जिस कर्मके उदयसें जीव नरक १ तिर्यंच २ मनुष्य ३ देवताकी गति पर्याय पावें, नरकादि नाम कहनेमें आवे, और जीव मरे तब जिस गतिका गतिनामकर्म, आयुकर्म मुख्यपणे और गतिनाम कर्म सहचारी होवे है, तब जीवकों आकर्षण करके ले जातेहै, तब वो जीव तिस गति नाम और आयु कर्मके वश हुआ थका जहां उत्पन्न होना होवे तिस स्थानमें पहुचेहै. जैसें मोरेवाली सूइकों चमक पाषाण आकर्षण कर्त्ता है और सूइ चमक पाषाणकी तर्फ जाती है, मोराभी सूइके साथही जाताहै, इस तरे नरकादि गतियोंका स्थान चमक पाषाण समान है, आयु कर्म और गतिनाम कर्म लोहकी सूइ समान है, और जीव मोरे

समान है वीचमें पोया हुआहै, इस वास्ते परभ वमें जीवको आयु और गतिनाम कर्म ले जातेहै, जैसा २ गतिनाम कर्मका जीवाने बंध करा है; शुभ वा अशुभ तैसी गतिमें जीव तिस कर्मके उदयसें जा रहता है, इस वास्ते जो अज्ञानी योने कल्पना कर रखी है कि पापी जीवकों यम और धर्मी जीवकों स्वर्गके दूत मरापीछे ले जा-तेहै तथा जबराइल फिरस्ता जीवांकों ले जाता है, सो सर्व मिथ्या कल्पना है, क्योंकि जब यम और स्वर्गीय दूत फिरस्ते मरते होगे, तब तिन-कों कौन ले जाता होवेगा, और जीवतो जगतमें एक साथ अनंते मरते और जन्मते, तिन सबके लेजाने वास्ते इतने यम कहांसें आते होवेंगे और इतने फिरस्ते कहा रहते होवेंगे? और जीव इस स्थूल शरीरसें निकला पीछे किसीकेभी हाथमें

नही आताहै, इस वास्ते पूर्वोक्त कल्पना जिनोंने सर्वज्ञका शास्त्र नही सुना है तिन अज्ञानीयोंने करीहै. इस वास्ते मुख्य आयुकर्म और गतिनाम कर्मके उदयसेंही जीव परभवमें जाताहै. इति गतिनाम कर्म ४. अथ जातिनाम कर्मका स्वरुप लिखते है. जिसके उदयसें जीव पृथ्वी, पाणी अग्नि, पवन, वनस्पतिरूप एकेंद्रिय, स्पर्शेंद्रियवाले जीव उत्पन्न होतेहै. सो एकेंद्रिय जातिनाम कर्म १ जिसके उदयसें दोइंद्रियवाले कृम्यादिपणें उत्पन्न होवे, सो द्वींद्रिय जातिनाम कर्म २ एवं तीनेंद्रि कीडीआदि, चतुरिंद्रिय भ्रमरादि, पंचेंद्रिय नरक पंचेंद्रिय पशु गोमहिष्यादि मनुष्य देवतापणे उत्पन्न होवे, सो पंचेंद्रिय जातिनामकर्म एवं सर्व ए उदारिक शरीर अर्थात् एकेंद्रिय, द्वींद्रिय, त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय, पंचेंद्रिय तिर्यंच मनु-

ष्यके शरीर पावनेकी तथा ऊदारीक शरीरपण परिणामकी शक्ति, तिसका नाम ऊदारिक शरीर नाम कर्म १० जिसकी शक्तिसें नारकी देवताका शरीर पावे, जिससें मन इछित रुप वणावे तथा वैक्रिय शरीरपणे पुद्गल परिणामनेकी शक्ति सो वैक्रिय शरीरनाम कर्म ११ एवं आहारिक लब्धि वालेके शरीरपणे परिणामावे १२ तैजस शरीर अंदर शरीरमें उश्नता, आहार पचावनेकी शक्तिरुप, सो तैजस नाम कर्म १३ जिसकी शक्तिसें कर्मवर्गणाकों अपने अपने कर्म प्रकृतिके परिणामपणे परिणामावे सो कार्मण शरीर नाम कर्म १७ दो बाहू २ दो साथल ४ पीठ५ मस्तक ६ उरुगाती उउदर पेट ७ ये आठ अंग और अंगोके साथ लगा हुआ, जैसें हाथसें लगी अंगुली साथ लसें लगा जानु, गोडा आदि इनका नाम ऊपांग

है, शेष अंगुलीके पर्व रेखा रोम नखादि प्रमुख अंगोपांगहै; जिसके उदयसें ये अंगोपांग पावे और इनपणे नवीन पुद्गल परिणमावे ऐसी जो कर्मकी शक्ति तिसका नाम उपांग नाम कर्महै. उदारीकोपांग १५ वैक्रियोपांग, १६ आहारिकोपांग. १७ इति उपांग नामकर्म ॥ पूर्वे बांध्या हुआ उदारीक शरीरादि पांच प्रकृति और इन पांचोके नवीन बंध होतेको पिछले साथ मेलकरके बंधावे जैसे राल लाखादि दो वस्तुयोंकों मिला देते है, तैसेही जो पूर्वापर कर्मका संयोग करे, सो बंधन नाम कर्म शरीरोंके समान पांच प्रकारकाहै. उदारिक बंधन वैक्रियबंधन इत्यादि एवं, २२ प्रकृति हुइ. पांच शरीरके योग्य विखरे हुइ पुद्गलांको एकठे करे, पीछे बंधन नामकर्म बंध करे, तिस, एकठे करणेवाला कर्म प्रकृतिका नाम संघातन नामक-

र्म है, सो पांच प्रकारका है, उदारिक संघातन, वैक्रिय सघातन इत्यादि एवं,२७ सत्तावीस प्रकृति हुइ, अथ उदारिक शरीरपणे जो सात धातु परिणामी है तिनमें हमकी संधिको जो दृढ करे सो संहनन नामकर्म, सो ब ६ प्रकारका है, तिनमेंसें जहा दोनो हाम दोनो पासे मर्कट बंध होवे तिसका नाम नराच है, तिन दोनों हाम्मोंके ऊपर तीसरा हाम पट्टेकी तरें जकड बंध होवे तिसका नाम ऋषन्न है, इन तीनो हाम्मके भेदनेवाली ऊपर खीली होवे तिसका नाम वज्रहै, ऐसी जिस कर्मके उदयसे हामका संधी दृढ होवे तिसका नाम वज्रऋषन्न नाराच संहनन नामकर्म है.२८ जहां दोनोहामोंके छेदमे मर्कटबंध मिले हुए होवे और उनके उपर तीसरे हाडका पट्टा होव ऐसी हाम संधी जिस कर्मके उदयसें होवे सो ऋषन्न

नाराच संहनन नामकर्म २९ जिन हाडोंका मर्क-
टबंध तो होवे परंतु पट्टा और कीली न होवे,जि-
सके उदयसें सो नाराच संहनन नामकर्म, ३०
जहां एक पासे मर्कटबंध और दूसरे पासे खीली
होवे जिस कर्मके उदयसें सो अर्द्ध नराच संहनन
नाम कर्म ३१ जैसें खीलीसें दो काष्ट जोडे होवे
तस हाडकी संधी जिस कर्मके उदयसे होवे,सो
कीलिका संहनन नाम कर्म ३२ दोनो हाडोंके छेहडे
मिले हुए होवे जिस कर्मसें सो सेवार्त्त संहनन
नामकर्म ३३ जिस कर्मके उदयसें सामुद्रिक शा-
स्त्रोक्त संपूर्ण लक्षण जिसके शरीरमें होवे तथा
चारो अंस बराबर होवे, पलाठी मारके बैठे तव
दोनों जानुका अंतर और दाहिने जानुसें वामा-
स्कंध और वामेजानुसें दाहिनास्कंध और पलाठी
पीठसें मस्तक मापता चारो मोरी बराबर होवे

और बत्तीस लक्षण संयुक्त होवे, ऐसा रुप जिस कर्मके ऊदयसे होवे तिसका नाम सम चतुरस्र संस्थान नामकर्म ३४ जैसें वड़ वृक्षका ऊपल्या भाग पुर्ण होवेहै, तैसेहै जो नाभीसें ऊपर संपुर्ण लक्षणवाला शरीर होवेऔर नाभीसें नीचे लक्षण हीन होवे, जिस कर्मके उदयसें सो निग्रोध परिमंडल संस्थान नामकर्म ३५ जिसका शरीर नाभीसें नीचे लक्षण युक्त होवे और नाभी सें उपर लक्षण रहित होवे, जिस कर्मके उदयसें सो सादिया संस्थान नामकर्म ३६ जहां हाथ पग मुख ग्रीवादिक उत्तम सुंदर होवे, और हृदय, पेट, पूठ लक्षण हीन होवे जिस कर्मके उदयसें सो कुब्ज संस्थान नामकर्म ३७ जहां हाथ पग लक्षण हीन होवे. अन्य अंग लक्षण संयुक्त अछे होवे जिस कर्मके उदयसें सो वामन संस्थान

जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरादि खांड, साकरादि समान रस होवे, सो मधुररस नामकर्म ५१ इति रस नाम कर्म जिसके उदयसे जीवके शरीरमे तथा शरीरके अवयव कठिन कर्कस गायकी जीभ समान होवे, सो कर्कस स्पर्श नाम कर्म ५२ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव माखणकी तरे कोमल होवे. सो मृदु स्पर्श नाम कर्म ५३ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा अवयव अर्क तूलकी तरें हलकें होवे सो लघु स्पर्श नामकर्म ५४ जिसके उदयसें लोहेवत् भारी शरीरके अवयव होवे, सो गुरू स्पर्श नामकर्म ५५ जिस कर्मके उदयसे जीवका शरीर तथा अवयव हिम बर्फवत् शीतल होवे, सोशीतस्पर्श नामकर्म५६ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा अवयव उष्ण होवे सो उष्ण

कर्म ५७ जिस कर्मके नदयसें जीवका शरीर तथा शरीरावयव घृतकी तरें स्निग्ध होवे, सो स्निग्ध स्पर्श नाम कर्म ५८ जिस कर्मके नदयसें जीवका शरीरावयव राखकीतरे रूखे होवे सो रुक्ष स्पर्श नामकर्म ५ए इति स्पर्श नामकर्म नरक, तिर्यंच मनुष्य, देव ए चार जगें जब जीव गति नाम कर्मके नदयसें वक्र बांकी गति करे, तब तिस जीवकों वांके जातेको जो अपने स्थानमें ले जावे, जैसे वैलके नाकमें नाथ तैसे जीवके अंतराल वक्र गतिमें अनुपूर्वीका नदय तथा जो जीवके हाथ पगादि सर्व अवयव यथा योग्य स्थानमे स्थापन करे, सो अनुपूर्वी नामकर्म सो. चार प्रकारका है, नरकानुपूर्वी १ तिर्यचानुपूर्वी २ मनुष्यानुपूर्वी ३ देवतानुपूर्वी ४ एवं सर्व ६३ हुइ, जिसके नदय से हाथी वृषनकी तरे शुन्न चलनेकी गति होवे

सो शुभ विहाय गति ६४ जिस कर्मके उदयसें ऊंटकी तरे बुरी चाल गति होवे, सो अशुभ विहाय गति नामकर्म ६५ जिसके उदयसें परकी शक्ति नष्ट हो जावे, परसें गंज्या पराभव करा न जाय, सो पराघात नामकर्म ६६ जिसके उदयसें श्वासोश्वासके लेनेकी शक्ति उत्पन्न होवे, सो उस्वास नामकर्म ६७ जिसके उदयसें जीवांका शरीर उष्ण प्रकाश वाला होवे, सूर्य मंडलवत्, सो आतप नामकर्म ६८ जिसके उदयसें जीवका शरीर अनुष्ण प्रकाशवाला होवे, सो उद्योत नामकर्म, चंद्र मंडलवत् ६९ जिसके उदयसें जीवका शरीर अति भारी अति हलका न होवे. सो अगुरु लघु नामकर्म ७० जिसके उदयसें चतुर्विध संघ तीर्थस्थापन करके तीर्थंकर पदवी लहे, सो तीर्थंकर नामकर्म ७१ जिस कर्मके

उदयसें जीवके शरीरमें हाथ, पग, पिंडी, साथल, पेट, छाती, बाहु, गला, कान, नाक, होठ, दांत, मस्तक, केश, रोम शरीरकी नशाकी विचित्र रचना, आंख, मस्तक प्रमुखके पमदें यथार्थ यथा योग्य अपने २ स्थानमें उत्पन्न करे होवे, संचयसें जैसे वस्तु बनतीहै तैसैही निर्माण कर्मके उदयसें सर्व जीवांके शरीरोमे रचना होतीहै, सो निर्माणकर्म ७२ जिसके उदयसें जीव अधिक तथा न्यून अपने शरीरके अवयव करके पीडा पावे, सो उपघात नामकर्म ७३ जिसके उदयसें जीव थावरपणा छोडी हलने चलनेकी लब्धि शक्ति पावे सो त्रसनाम कर्म है ७४ जिस कर्मके उदयसें जीव सूक्ष्म शरीर छोडके बादर चक्षुग्राह्य शरीर पावे सो बादर नामकर्म ७५ जिस कर्मके उदयसें जीव प्रारंभ करी हुइ छ ६ पर्याप्ति

अर्थात् आहार पर्याप्ति १ शरीर पर्याप्ति २ इंद्रिय पर्याप्ति ३ सासोत्स्वास पर्याप्ति ४ नापा पर्याप्ति ५ मनः पर्याप्ति ६ पूरी करे, सो पर्याप्त नामकर्म ७६ जिसके नदयसें एक जीव एकही नदारिक शरीर पावे सो प्रत्येक नामकर्म ७७ जिस कर्म के नदयसें जिवके हाम दांतादि दृढ बंध होवे, सो थिर नामकर्म ७७ जिस कर्मके नदयसें ना-निसे नपरला नाग शरीरका पावे, डुसरेके तिस अंगका स्पर्श होवे तोनी बुरा न माने सो शुन नामकर्म ७ए जिस कर्मके नदयसें विना नपका रके कस्यांनी तथा सबंध विना वल्लन्न लागे, सो सौनाग्य नामकर्म ७० जिंस कर्मके नदयसे जीवका कोकिलादी समान मधुर स्वर होवे, सो सु-स्वर नामकर्म ७१ जिस कर्मके नदयसे जीवका वचन सर्वत्र माननीय होवे सो आदेय नामकर्म

८२ जिस कर्मके उदयसें जगतमें जीवकी यशकीर्त्ति फैले, सो यश कीर्त्ति नामकर्म ८३ जिस कर्मके उदयसें जीव त्रसपणा छोडकी स्थावर पृथ्वी पानी, वनस्पत्यादिकका जीव हो जावे, हली चली न सके, सो स्थावर नामकर्म ८४ जिस कर्मके उदयसे सूक्ष्म शरीर जीव पावे सो सूक्ष्म नामकर्म ८५ जिस कर्मके उदयसें प्रारंभी हुइ पर्याप्ति पुरी न कर सके, सो अपर्याप्त नामकर्म.

८६ जिस कर्मके उदयसे अनंते जीव एक शरीर पामे, सो साधारण नामकर्म ८७ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरमें लोहु फिरे हाडादि, सिथल होवे, सो अथिर नामकर्म ८८ जिस कर्मके उदयसे नाभीसें नीचेका अंग उपांगादि पावे, सो अशुभ नामकर्म ८९ जिस कर्मके उदयसें जीव अपराधके विना करेही बुरा लगे, सो दौर्भाग्य

नामकर्म ए० जिस कर्मके उदयसें जीवका स्वर मार्जार, ऊंट सरीखा होवे, सो दुःस्वर नामकर्म ए१ जिस कर्मके उदयसें जीवका वचन अच्छाभी होवे, तोभी लोक न माने सो अनादेय नामकर्म ए२ जिस कर्मके उदयसे जीवका अपयश अकीर्त्ति होवे, सो अपयश कीर्त्ति नामकर्म, ए३ इति नामकर्म. ६.

अथ नामकर्म बंध हेतु लिखते है ॥ देव गत्यादि तीस ३० शुभ नामकर्मकी प्रकृतिका बंधक कौनहोवे, सो लिखते है. सरल कपट रहित होवे जैसी मनमे होवे तैसेही कायकी प्रवृत्ति होवे. किसीकोंभी अधिक न्युन तोला, मापा करके न ठगे, परवंचन बुद्धि रहित होवे, ऋद्धिगारव, रसगारव, सातागारव, करकेरहित होवे, पाप करता हुआ डरे परोपकारी सर्व जन प्रिय क्षमा

दि गुणयुक्त ऐसा जीव शुभ नामकर्म बांधे तथा अप्रमत्त यतिपणे चारित्रियो आहारकद्विक बांधे, १ और अरिहंतादि वीश स्थानककों सेवता हुआ तीर्थंकर नामकर्मकी प्रकृति बांधे। और इन पूर्वोक्त कामोंसे विपरीत करे अर्थात् बहुत कपटी होवे, कूडा, तोला, मान, मापा करके परको ठगे, परद्रोही, हिंसा, जूठ, चौरी, मैथुन, परिग्रहमे तत्पर होवे, चैत्य अर्थात् जिनमंदिरादिककी विराधना करे, व्रतलेकर भग्न करे, तीनो गौरवमें मत्त होवे, हीनाचारी ऐसा जीव नरक गत्यादि अशुभ नाम कर्मकी ३४ चौतीस प्रकृति बांधे येह सतसठ ६७ प्रकृतिकी अपेक्षा करके बंध कथन करा, इति नामकर्म ६ संपुर्ण.

अथ गोत्रकर्म तिसके दो भेद. प्रथम उंच गोत्र, विशिष्ट जाती, क्षत्रिय कास्यपादिक उ-

वोंक्त गुणोसें विपरीत गुणवाला अर्थात् मत्सरी १ जात्यादि आठ मद सहित अहंकारके उदयसें किसीको पढावें नही, सिद्ध प्रवचन अरिहंत चैत्यादिककी निंदा करे, नक्ती न होवे, सो जीव हीन जाती नीच गोत्र बांधे ॥ इति गोत्रकर्म ७.

अथ आठमा अंतराय कर्मका स्वरूप लिखतेहै, तिसके पांच भेद है. जिस कर्मके उदयसें जीव शुद्ध वस्तु आहारादिकके हूएभी दान देंनेकी इच्छाभी करे, परंतु दे नही सके, सो दानांतराय कर्म १ जिस कर्मके उदयसें देनेवालेके हूएभी इष्ट वस्तु याचनेसेंभी न पावे. व्यापारादिमें चतुरभी होवे तोभी नफा न मिले, सो लाभांतराय कर्म २ जिस कर्मके उदयसें एक वार भोगने योग्य फूलमाला मोदकादिकके हूएभी भोग न कर सके, सो भोगांतराय कर्म ३ जिस कर्मके

उदयसें जो वस्तु बहुत वार भोगनेमें आवे, स्त्री आभर्ण वस्त्रादि तिनके हूएभी वारंवार भोग न कर सके, सो उपभोगांतराय कर्म ४ जिस कर्म के उदयसे मिथ्या मतकी क्रिया न कर सके, सो वालवीर्यांतराय कर्म १ जिसके उदयसें सम्यगूदृ-ष्टी, देश वृत्ति धर्मादि क्रिया न कर सके, सो वाल पंडित वीर्यांतराय कर्म, जिसके उदयसें सम्यग् दृष्टी साधु मोक्ष मार्गकी संपर्ण क्रिया न कर सके सो पंडित वीर्यांतराय कर्म अथ अंतराय कर्मके बंध हेतु लिखतेहै. श्री जीन प्रतिमाकी पुजाका निषेध करे, उत्सूत्रकी प्ररूपणा करे, अन्य जीवां-कों कुमार्गमे प्रवर्त्तावे, हिंसादिक आठारह पाप सेवनेमें तत्पर होवे, तथा अन्य जीवांको दान ला भादिकका अंतराय करे, सो जीव अंतराय कर्म बांधे. इति अंतराय कर्म ८.

इस तरें आठ कर्मकी एकसो अमतालीस १४८ कर्म प्रकृतिके उदयसे जीवोके शरीरादिककी विचित्र रचना होतीहै, जैसे आहारकी खानेसे शरीरमें जैसें जैस रग और प्रमाण संयुक्त हाम, नशा, जाल, आंखके पमदे मस्तकके विचित्र अवयवपणें तिस आहारका रस परिणमता है, यह सर्व कर्मोंके उदयसें शरीरकी सामर्थ्यसें होता है, परतु यहां ईश्वर नही कुछभी कर्ताहै तैसेही काल १ स्वभाव २ नियति ३ कर्म ४ उद्यम ५ इन पाचो कारणोसें जगतकी विचित्र रचना हो रहीहै. जेकर ईश्वर वादी लोक इन पुर्वोक्त पाचोके समवायको नाम ईश्वर कहते होवे तव तो हमभी ऐसे ईश्वरको कर्त्ता मानतेहै. इसके सिवाय अन्य कोइ कर्ता नहीहै, जेकर कोइ कहे जैनीयोंने स्वकपोल कल्पनासें कर्मोके भेद वना र-

खेहै. यह कहना महा मिथ्याहै, क्योंकि कार्यानु मानसे जो जैनीयोने कर्मके भेद मानेहे वे सर्व सिद्ध होतेहै, और पूर्वोक्त सर्व कर्मके भेद सर्वज्ञ वीतरागने प्रत्यक्ष केवल ज्ञानसें देखेहै इन कर्मोंके सिवाय जगतकी विचित्र रचना कदापि नही सिद्ध होवेगी, इस वास्ते मुज्ञ लोकोकों अरिहंत प्रणीत मत अंगीकार करना उचितहै, और ईश्वर वीतराग सर्वज्ञ किसी प्रमाणसेभी जगतका कर्त्ता सिद्ध नही होताहै, जिसका स्वरूप ऊपर लिख आये है.

प्र. १५५—जैन मतके ग्रंथ श्री महावीर जीस लेके श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण तक कंठाग्र रहेतेहै क्योंकर माने जावे, और श्वेतांबरमत मुल का है और दिगंबर मत पीछेसें निकला, इस कथनमें क्या प्रमाण है?

उ.–जैन मतके आचार्य सर्व मतोंके आचार्योंसें अधिक बुद्धिमान थे, और दिगंबराचार्यों में श्वेतांबर मतके आचार्य अधिक बुद्धिमान् आत्मज्ञानी थे अर्थात् बहुत कालतक कंठाग्र ज्ञान रखनेमें शक्तिमान थे, क्योंकि दिगंबर मतके तीन पुस्तक धवल ७०००० श्लोक प्रमाण १ जयधवल ६०००० श्लोक प्रमाण १ महाधवल ४०००० श्लोक प्रमाण ३ श्री वीरात् ६८३ वर्षे ज्येष्ठशुद ५ के दिन भूतबलि १ पुष्पदंतनामे दो साधुयोंने लिखे थे, और श्वेतांबर मतके पुस्तक गिणतीमें और स्वरूपमे अलग अलग एक कोटी १०००००० पांचसो आचार्योंने मिलके और हजारों सामान्य साधुयोने श्री विरात् ९८० वर्षे वल्लभी नगरीमे लिखे थे, और बौद्धमतके पुस्तकर्ता श्री विरात् ओंगेसें वर्षों पीछेही लिखे गयेथे, जिनोकी बुद्धि

अल्प थी तिनोने अपने मतके पुस्तक जलदीसें लिख लीने, और जीवोकी महा प्रौढ धारणा करनेकी शक्तिवाली बुद्धिथी तिनोंने पीछेसे लिखे. यह अनुमानसें सिद्ध है, और दिगंवर मतमें श्री महावीरके गणधरादि शिष्योसे लेके ५०५ वर्ष तकके काल लगे हुए हजारो आचार्योमेसें किसी आचार्यका रचा हुआ कोइ पुस्तक वा किसी पुस्तकका स्थल नही हे इस वास्ते दिगंवर मत पीछेसे उत्पन्न हुआ है.

प्र. १५६–देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणनें जो ज्ञान पुस्तकोंमें लिखाहै, सो आचार्योंकी अविछिन्न परंपरायमें चला आया सो लिखा है, परं स्वकपोल कल्पित नही लिखा, इसमें क्या प्रमाण है. जिससे जैनमतका ज्ञान सत्य माना जावे.

उ.–जनरल कनिंनहाम साहिब तथा मा-

कर हॉरनल तथा डाक्तर बूलर प्रमुखोने मथुरा नगरीमेंसें पुरानी श्री महावीरस्वामीकी प्रतिमाकी पलांठी ऊपरसें तथा कितनेक पुराने स्तंभो ऊपरसें जो जूने जैनमत संबंधी लेख अपनी स्वच्छ बुद्धिके प्रभावसें वांचके प्रगट करे है, और अंग्रेजी पुस्तकोंमें छापके प्रसिद्ध करेहै तिन जूने लेखोंसें निसंदेह सिद्ध होताहै कि, श्रीमहावीरजीसें लेके श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण तक जैन श्वेतांवर मतके आचार्य कंठाग्र ज्ञान रखनेमे बहुत उद्यमी और आत्मज्ञानी थे, इस वास्ते हम जैन मतवाले पूर्वोक्त यूरोपीयन विद्धानोका बहुत उपकार मानते है, और मुंबइ समाचार पत्रवाला भी तिन लेखोकों वांचके अपने संवत १९४४ के वर्षाके चार मासके एक प्रतिदिन प्रगट होते पत्रमें लिखताहै कि, जैनमतका कल्पसूत्र कितनेक

लोक कल्पित मानते थे, परंतु इन लेखोंसें जैन मतका कल्पसूत्र सच्चा सिद्ध होता है.

प्र. १५७–व लेख कौनसेंहै, जिनका जिकर आप क्राले प्रश्नोत्तरमें लिख आये है, और तिन लेखोंसें तुमारा पूर्वोक्त कथन क्योंकर सिद्ध होता है !

उ.–वे लेख जेसें डाक्तर बूलर साहिबने सुधारके लिखे है और जैसे हमको गुजराती भाषांतरमें भाषांतर कर्त्ताने दीयेहै तैसेंही लिखतेहें, येह पूर्वोक्त लेख सर ए. कनिंगहामकें आर्चिओलोजिकल(प्राचीन कालकी रही हुइ वस्तुयों संबंधी) 'रिपोर्टका पुस्तक ७ भागमेंमें चित्र १३-१४ तेरमे चौदमे तकप्रगट करे हुएमथुरांके शिला लेख तिनमें केवल जैन साधुयोंका संप्रदाय आचार्योंकी पंक्तिया तथा शाखायों लिखीहुइहै, के-

वल इतनाही नही लिखा हुआहै, किंतु कल्पसु त्रमें जे नवगण (गच्छ)तथा कुल तथा शाखायें कहीहै, सोभी लिखी हुइहै, इन लेखोंमें जो सं वत् लिखा हुआ है, सो हिंदुस्थान और सीथीय देशके बीचके राजा कनिश्क १ हविश्क २ औ वासुदेव ३ इनके समयके संवत् लिखे हुएहै औ अब तक इन संवतोकी शरूआत निश्चित नही हुइहै, तोभी यह निश्चय कह सकते है कि येह हिंदुस्थान और सीथीया देशके राजायोंका राज्य इसवीसनके प्रथम सैकेके अंतसें और दूसरे सैके के पहिले पौणेभागसें कम नही ठरा सक्तेहै, क्यों कि कनिश्क सन इशवीसनके ७८ वा ७९ में व र्षमें गद्दी ऊपर बैठा सिद्द हुआहै, और कितनेक लेखोंमे इन राजायोंका संवत् नही है, सो लेख इन राजयोंके राज्यसें पहिलेका है, ऐसे मालूम

बूलर साहिब कहता है.

प्रथम लेख सुधरा हुआ नीचे लिखा जाता है. सिद्धं। सं २०। ग्रामा १। दि १०+५। कोट्टियतो, गणतो, वाणियतो, कुलतो, वएरितो शाखातो, शिरिकातो, भत्तितो, वाचकस्य अर्य्यसंघ सिंहस्य निर्व्वर्त्त नंदत्तिलस्य...वि.–लस्य कोठुं विकिय, जयवालस्य, देवदासस्य, नागदिनस्य च नागदिनाये, च मातु श्राविकाये दिनाये दानं। इ। वर्द्धमान प्रतिमा. इस पाठका तरजुमा रूप अर्थ नीचे लिखते है. "फतेह" संवत् २०का ग्रीष्म कालका मास १ पहिला मिति १५ ज्यवल (जय पाल)की माता वी...लाकी स्त्री दतिलकी (बेटी) अर्थात् (दिन्ना अथवा दत्ता) देवदास और नागदिन्न अथवा (नागदत्त) तथा नागदि नागदिन्ना अथवा ना ा ं

शिष्यकी वक्तीस कीर्तिमान् वर्द्धमान प्रतिमा (यह प्रतिमा) कौटिक गच्छमेंसें वाणिज नामेकुलमेंसें वैरी शाखाका सीरीका भागके आर्य संघसिंहकी निर्वरतन है, अर्थात् प्रतिष्ठित है. ॥ इति डाक्तर बूलर ॥

अथ दुसरा लेख. नमो अरहंतानं, नमो सिद्धानं, सं. ६०+ २ ग्र. ३ दि. ५ एताये पुरवायेरारकस्य अर्यककसर्ध स्तस्य शिष्या आतापेको गहवरी यस्य निर्वतन चतुवस्पर्न संघस्य या दिन्ना पटिन्ना (नो.१) ग (१ ? वैद्दिका ये दत्ति ॥ इसका तरजुमा ॥ अरहंतने प्रणाम, सिद्धने प्रणाम, संवत ६२ यह तारीख हिंदुस्थान और सीथीआ वीचके राजायोंके संवत्के साथ सबंध नही रखती है, परंतु तिनोंसें पहिलेके किसी राजेका संवत् है, क्योंकि इस लेखकी लिपी बहुत असल

है. ऊश्च कालका तिसरा मास ३ मिति ५ क्रप-रकी तारीखमें जिस समुदायमें चार वर्गका समावेश होता है तिस समुदायके ऊपन्नोग वास्ते अथवा हरेक वर्गके वास्ते एकैक हिस्सा इस प्रमाणसे एक । या। देनेमें आयाथा । या । यह क्या वस्तु होवेगी सो मैं नही जानता हुं, पति न्नोग अथवा पति भाग इन दोनोमेंसें कौनसा शब्द पसिंद करने योग्य है के नही, यहन्नी मैं नही कह सक्ताहूं (आ) आतपीको गहवरीरारा (राधा) कारहीस आर्य—कर्कसघस्त (आर्य—कर्क सघशील)का शिष्यका निर्वतन (होइके) वइहीक (अथवा वइहीता)की बक्षीस, यह नाम तोमके इस प्रमाणे अलग कर सक्ते है, आतपीक—औगहव—आर्य पीछेके न्नागमें यह प्रगट है, कि निर्वतन याके शाथ एकही विन्नक्तिमे है, तिस वास्ते अन्

इसरे लेखोमेंभी बहुत करकेऐसीही पद्धतिके लेख लिखे हुए है, निर्वर्तयतिका अर्थ सामान्य रीते सो रजु करता है, अथवा सो पूरा करता है एसा है, तिससे बहुत करके ऐसे वतलाता है के दीनी हुइ वस्तु रजु करनेमें आइथी अर्थात् जिस आचार्यका नाम आगे आवेगा तिसकी इछासें अर्पण करनेमे आइथी, अथवा तिससें सो पुरी करनेमे आइथी. गणतो, कुलतो इत्यादि पांचमी विभक्तिके रुप वियोजक अर्थमे लेने चाहिये, स्पेइजरका संस्कृतकी वाक्य रचनाका पुस्तक ११६ । १ देखो । इति डाक्तर बूलर. अथ तीसरा लेख॥ सिद्धं महाराजस्य कनिश्कस्य राज्ये संवत्सरे नवमें ॥९॥ मासे प्रथ १ दिवसे ५ अस्यां पूर्वाये कोटियतो, गणतो, वाणायतो, कुलतो, वइरीतो, साखातो वाचकस्य नागनंदि सनिर्वरतनं ब्रह्मधू-

तुये न्नट्टिमितस कुटुंविनिये विकटाये श्री वर्द्धमानस्य प्रतिमा कारिता सर्व सत्वानं हित सुखाये, यह लेख श्री महावीरको प्रतिमा ऊपरहै ॥ इस का तरजुमा नीचे लिखते है ॥ फतेह महाराजा कनिश्यके राज्यसे ए नवमें वर्षमेंका १ पहिले महीनेम मिति ५ पांचमीमें ब्रह्माकी वेट्टी और न्नट्टिमित (न्नट्टिमित्र)की स्त्री विकटा नामकीने सर्व जोवांके कल्याण तथा सुखके वास्ते कीर्त्तिमान वर्द्धमानकी प्रतिमा करवाइ है, यह प्रतिमा कोटिक गण (गच्छ) का वाणिज कुलका और वइरी शाखाका आचार्य नागनंदिकी निर्वतन है, (प्रतिष्टितहै), अव जो हम कल्पसूत्र तर्फ नजर करीये तो तिस मूल प्रतके पत्रे । ८१–८२। इस. वी इ. वाल्युम (पुस्तक) २२ पत्रे २०२ हमको मालम होताहकि सुठिय वा सुस्थित नामे आ-

चार्य श्री माहावीरके आठमे पट्टके अधीकारीने कौटिक नाम गण (गञ) स्थापन कराथा, तिसके विभाग रूप चार शाखा तथा चार कुल हूए, जिसकी तीसरी शाखा वइरीथी और तीसरी वाणिज नाम कुलथा यह प्रगट हैकि गण कुल तथा शाखाके नाम मथुरांके लेखोंमें जो लिखेहे वे कल्पसूत्रके साथ मिलते आतेहै. कोटियकुठक कोमीयका पुराना रूपहै, परंतु इस वातकी नकल लेनी रसिकहैकि वइरी शाखा सीरीकाभत्ती (स्त्रीकाभक्ति)जो नंबर ६ के लेखमें लिखी हूइहै तिसके भागका कल्पसूत्रके जाननेमें नही था, अर्थात् जब कल्पसूत्र हुआथा तिस समयमें सो भाग नही था. यह खाली स्थान ऐसाहैकि जो सुहकी दंत कथा (परपरायसें चला आया कथन) सें लिखी हुइ यादगीरीसें मालुम होता है. इति

माक्कर बूलर ॥

अथ चौथा लेख ॥ संवत्सरे ९० व......
स्य कुटुंबानि. वदानस्य वोधुय...क...गणता
...वहुकतो, कालातो, मझमातो, शाखाता...
सनिकाय न्नतिगालाए थवानि...सिद्द=स ५ हे
१ दि १० + २ अस्य पूर्वा येकोटो...इस लेखकी लीनी हुइ नकल मेरे वसमे नहीहै, इस वास्ते इसका पूर्ण रूप मैं स्थापन नही कर शकताहूं, परंतु पंक्तिके एक टुकडेके देखनेसें ऐसा अनुमान हो सक्ताहैके यह अर्पण करनेका काम एक स्त्रीसें हूआथा, ते स्त्री एक पुरुपकी वहु (कुटुंवनी) तरीके और दूसरेके वेटेकी वहु (वधु) तरीके, लिखने में आइथी ॥ दूसरी पंक्तिका प्रथम सुधारे साथ लेख नीचे लिखे मुजव होताहै ॥ कोटीयतो गण तो (प्रश्न) वाहनकतो कुलतो मझमातो साख-

तो ...सनीकायेके समाजमें कोटीय गच्छके प्रश्न-वाहनकी मध्यम शाखामेंके कोटीय और प्रश्नवाहनकये दो नाम होवेगें, ऐसें मुझको निसंदेह मालुम होताहै, क्योंकी इस लेखकी खाली जगा तिस पुर्वोक्त शब्द लिखनेसें बराबर पूरी होजाती है, और दूसरा कारण यहहैकि कल्पसूत्र एस. बी; इ. पत्र-२९३ मेमे मध्यम शाखा विषयक हकीकतभी पूर्वोक्तही सूचन करतीहै, यह कल्प सूत्र अपनेकों एसे जनाताहैकि सुस्थित और सुप्रतिबुधका दूसरा शिष्य प्रीयग्रंथ स्थविरें मध्यमा शाखा स्थापन करीथी, हमकों इन-लेखोपरसे मालुम होताहैके प्रोफेसर जेकूका-करा हुआ गण, कुल तथा शाखायोंकी संज्ञाका खुलासा खराहै, और प्रथम संज्ञा शाला बतातीहै, दूसरी आचार्यों की पंक्ति और तीजी पंक्तिमेसे अलग हो गइ,

शाखा वतावेहै, तिससें ऐसा सिद्ध होता है, कल्प सूत्रमें गण (गच्छ) तथा कुल जणाया विना जो शाखायोका नाम लिखताहै, सो शाखा इस रूपरल्पे पिछले गणके तावेकी होनी चाहिये, और तिसकी उत्पत्ति तिस गच्छके एक कुलमेंसें हुइ होइ चाहिये, इस वास्ते मध्यम शाखा निसंदेह कौटिक गच्छमे समाइ हुइथी, और तिसके एक कुलमेंसे फटी हुइ वांकी शाखाथीके जिसके वीचका चौथा कुल प्रश्नवाहनक अर्थात् पणहवाहणय कहलाताहै, इस अनुमानकी सत्यता करने वाला राजशेखर अपने रचे प्रबंध कोशमें जो कोश तिनोंमें विक्रम संवत् १४०५ में रचा है, तिसकी समाप्तिमें अपनी धर्म सवंधी उलाद विषयिक लिखी हुइ हकीकतसे सावुत होतीहै, सो अपनेको जनाता है कि में कोटिक गण प्रश्नवा

इन कुल मध्यम शाखा हर्पपुरीय गछ और मल धारी संतान, जो मलधारी नाम अभयदेवसूरि कों विरद मिला था, तिसमेंसे हु ॥ १, २, केपिछ ले शब्दोको सुधारे करनेमे मै समर्थ नहीहुं, परं तु इतना तो कह सक्ताहुंके यह बत्तीस स्तंभोकी लिखी हुइ मालुम होती है, ५ कोटिय गण अंत नंबर २ में लिखा हुआ मालुम होताहै, जहां १, १, की २ दूसरी तर्फकी यथार्थ नकल नीचे प्र- माणे वंचातीहै, सिद्ध स_५ हे१ दी १० +२ अस्य पुरवाये-कोटो...सर ए. कनिंगहामकी लीनीहुइ नकलसे में पिछले शब्द सुधार सक्ताहुं, सो ऐसें अस्यापुरवाये कोट (कीय) मालुम होता है, परंतु टकारके ऊपरका स्वर स्पष्ट मालुम नही होता है, और यकारके वामे तर्फका स्थान थोडासाही मा- लुम होता है ॥ ६ एक आगेके गणका तथा ति-

सके एक कुलके नामोंका अपभ्रंसरूप नंवर १
वाला चित्र चौदवेमें १४ मालुम होता है, जव
यथार्थ नकल नीचे लिखे प्रमाणे वांचनेमें आत
है ॥ पंक्ति पहिली ॥ स=४० ७ग्र २ मी २० (
तासय पुरवायेवरणेगतीपेत्तीवमीकाकुलवचकुस
रेहेनदीस्यसासस्यसेनस्यनीवतनंसावकद ॥ पंति
दूसरी ॥ पशानवधयगीह...ग..त्र..प्रपा...ना..
मात...॥ मैं निसंदेह कहताहुंके गती त्र्यूल
वांचनेमें आया है, और सो खरेखरा गणे है, जे
कर इसतरे होवेतो वरणेत्र्यो इस सरीषाहीशव
चारणेके वदले भूलसे वांचनेमें आया होना च
हिये, क्योंकि यह गण जो कल्पसूत्र एस,बी. इ
वाल्युम पत्रे २०१ प्रमाणे आर्य सुहस्तिका पां
मा शिष्य श्री गुप्तसें स्थापन हूआथा, तिसक
डुसरा कुल प्रीतिधार्मिक है, (पत्रे. २०२) यह

इजसें मालुम होता हैकि, यह नाम पेतिवमिक कुलके आचार्यका संयुक्त नाम पेतिवमिक कुल वाचकस्यमे गुप्त रहा हूआ है. जोके पेतिवमिक संन्नवित शब्द है, और संस्कृत प्रइत्ति वार्मिकके दर्शक दाखल प्रीतिवर्मनका साधिक शब्द तद्दित गिणतीमे करीएतोभी मैं ऐसे मानताहूंके यह यथार्थ नकलकी खामी ऊपर तथा ध और व की वीचमें निजीकके मिलते हुए ऊपर विचार करतां सो वदलाके पेतिधमिक होना चाहिये, वांचणेमें दूसरी जूल यह आचार्यके नाममे जहा ह के ऊपर ए—मात है सो असली पिछले व अक्षरके पेटेकी है, इस नामका पहिला जाग अवस्य रेहे नही था, परंतु रोह था के जो रोह गुप्त रोहसेन और अन्य शब्दोमें मालुम पमता है. दू

सरी पंक्तिमें थोड़ासाही सुधारनेका है, जो प्रपा यह अक्षर शुद्ध होवे और तिनका शब्द बनता होवे, तबतो अर्पणकरा हुआ पदार्थ एक पाणी पीनेका ठाम होना चाहिये, अब में नीचे लिखे मुजब थोड़ासा बीचमें प्रक्षेप करना सूचन करताहुं ॥ स ४७ ग्र २ दि १० एतस्ये पुरवाये चार णेगणे पेतीधमिक कुलवाचकस्य, रोहनदीस्य, सिसरय, सेनस्य, निवतनं सावक. दर......... ...प्रपा (दी) ना...इसका तरजुमा नीचे लिखते है ॥

संवत् ४७ उष्ण कालका महीना २ दूसरा मिति १० ऊपर लिखी मितिमे यह संसारी शिष्य द...का.....।.....यह एक पाणी पीनेका ठाम देनेमें आयाथा,यह रोहनदी (रोहनंदि)का शिष्य और चारण गणके पेतिधमिक (४२) कु-

लका आचार्य सेनका निवतन (है) ॥८ पिछला लेख जो ऐसीही रीतीसें कल्पसूत्रमें जनाया हुआ एक गण कुल तथा शाखाका कुछक अपभ्रंश और करे हुए नामाकों बतलाता है, सो नंबर २० चित्र १५का लेख है, तिसकी असली नकल नीचे लिखे मूजब वंचाती है, ॥ पंक्ति पहेली ॥सिद्द ॐ नमो अरहतो महावीरस्ये देवनासस्य राज्ञा वासुदेवस्य संवतसरे। ९. + ८। वर्ष मासे दिवसे १०+१ ए तास्या ॥ पंक्ति दूसरी॥ पूर्वेवया अर्यरेहे नियातो गण पुरीधका कुल व पेत पुत्रीका ते शाखातो गणस्य अर्य–देवदत्त. वन. ॥ पंक्ति तीसरी ॥ रयय–क्शेमस्य ॥ पंक्ति ४ ॥ प्रकगीरीणे ॥पंक्ति ५ मी ॥ किहदिये प्रज. ॥ पंक्ति ६ ठ्ठी ॥तस्य प्र वरकस्यधोतु वर्णस्य गत्व कस्यस. युय मित्र [१] स .....दत्तगा ॥ पक्ति ७ मी ॥ ये . वतोमह

सरी पंक्तिमें थोम्मासाही सुधारनेका है, जो प्रपा यह अक्षर शुद्ध होवे और तिनका शब्द बनता होवे, तबतो अर्पणकरा हुआ पदार्थ एक पाणी पीनेका गाम होना चाहिये, अब में नीचे लिखे मुजब थोम्मासा बीचमें प्रक्षेप करना सूचन करताहुं ॥ स ४७ ग्र २ दि १० एतस्ये पुरवाये चार णेगणे पेतीधमिक कुलवाचकस्य, रोहनदीस्य, सिसरय, सेनस्य, निवतनं सावक. दर......... ...प्रपा (दी) ना...इसका तरजुमा नीचे लिखते है ॥

संवत् ४७ उष्ण कालका महीना २ दुसरा मिति १० उपर लिखी मितिमें यह संसारी शिष्य द...का.....।.....यह एक पाणी पीनेका गाम देनेमें आयाथा,यह रोहनदी (रोहनंदि)का शिष्य और चारण गणके पेतिधमिक (प्रइतिधर्मिक)कु-

हुआ अक्षर मेरी समझ मूजब विराम के साथें म है, दूसरा महावीरास्येकी जगे महावीरस्य धरना चाहिये, दुसरी पंक्तिमें पूर्व वयाके बदले पूर्ववाये गणके बदले गणातो, काकुलवके बदले० काकुजतो०टे के बदले पेतपुत्रिकातो, और गण-स्यके बदले गणिस्य वांचनेकी जरूरीआत हरेक कोइको प्रगट मालुम पडेगी, नामोके संबंधमें अर्य-रोहनीय अशक्य रूप है, परंतु जेकर अपने ऐसे मानीयेके हकी ऊपर इका असल खरेखरा पिछले चिन्हके पेटेका है, तद पीछे सो अर्य-रोहनीय (आर्य रोहनके तावेका) अथवा आर्य रोहनने स्थाप्या हुआ, अर्थात संस्कृतमें आर्य रोहण होता है, इस नामका आचार्य जैन दंत कथामें अच्छितरे प्रसिद्ध है, कल्पसूत्र एस. –

तीसरी पंक्तिसे लेके सातमी पंक्तिताइंतो सुधारा हो सके तैसा है नही, और मैं तिनके सुधारनेकी मेहनतनी नही करता हुं, क्योंके मेरे पास मुझकों मदत करे तैसी तिसकी लीनी हुइ नकल नही है, इतनीही टीका करनी बस है के ठठी पंक्तिमें वेटीका शब्द धितु और तिस पीठेका मयुयसो वहुलतासें (माताका) मातुयेके वदले नूलसें बांचनेमे आया है, सो लेख यह बतलाता है के यह अर्पणनी एक स्त्रीने करा था ॥ पंक्ति २। ३ ॥ दूसरी तीसरीमें लिखे हुए नामवाले आचार्योंके नामों यह बड्डीस साथका सवंध अंधेरेमें रहता है पिठले वार बिंडुयेकी जगे दूसरा नमस्कार नमो नगवतो महावीरस्यकी प्राये रही हूइ है, प्रथम पंक्तिमें शिदओ के वदले निश्चित शब्द प्रायें करके मिर्द है, सर ए कनिंगहामेआ वांचा

यह पिछला रूपपरिहा. क के बदले मूलसें वांच-
नेमें आयाहै; दुसरी पंक्तिके अंतमे पुरुषका नाम
प्राये छठी विभक्तिमें होवे और देवदत्त व सूधा-
रके देवदतस्य कर सक्तेहै ॥ ऐसें पुर्वोक्त सुधारे-
सें प्रथम दो पंक्तियां नीचे मुजब होतीहै ॥ १
सिद्ध (म्) नमो अरहतो महावीर(अ) स्य् (अ)
देवनासस्या- ९, पुर्व्व्, (ओ) यू (ए) अयूय-र्
(ओ) ह् (अ) नियतोगण (तो) पू (अ) रि (हास
क् (अ) कुल (तो) प् (ओन्) अप् (अ) त्रिकात्
(ओ) साखातोगण (इ) स्य अर्यूय-देवदत्त (स्य)
न......इसका तरजुमा नीचे लिखे मुजब होवेगा.

"फतेह" देवतायोंका नाश करता अरहत
महावीरकों प्रणाम (यह गुणवाचक नामके ख-
रेपणेमें मेरेकों वहुत शकहै, परंतु तिसका सुधा-
रा करनेको मैं असमर्थहूं) राजा वासूदेवके संव

पत्र २९१ मे लिखे मूजब सो आर्य सुहस्तिका पहिला शिष्य था, और तिसने उद्देह गण स्थापन करा था. इस गणकी चार शाखा और ६कुल हुएथे, तिसकी चौथी शाखाका नाम पूर्ण पत्रिका मुख्य करके तिसके विस्तारकी बाबतमें इस लेखके नाम पेतपुत्रिकाके साथ प्रायें मिलता आताहै, और यह पिछला नाम सुधारके तिसको पोनपत्रिका लिखनेमें मैं शंकाभी नही करताहूं. सोइ नाम संस्कृतमें पौर्णपत्रिकाकी बराबर होवेगी, और सो व्याकरण प्रमाणे पूर्ण पत्रिका करते हुए अधिक शुद्धनाम है, इन छहो कुलोमेसें परिहासक नामभी एक कुलहै, जो इस लेखमें कर गए हूए नाम पुरिध-कके साथ कुछक मिलतापणा बतलाताहै, दूसरे मिलते रूपों ऊपर विचार करता हूआ मै यह संभवित मानताहू के,

यह पिछला रूपपरिहा. क के बदले भूलसे वांच-नेमें आयाहै; दुसरी पंक्तिके अंतमे पुरुषका नाम प्राये छट्ठी विभक्तिमें होवे और देवदत्त व सूधा-रकें देवदतस्य कर सक्तेहै ॥ ऐसें पुर्वोक्त सुधारे-सें प्रथम दो पक्तियां नीचे मुजव होतीहै ॥ १

सिद्द (म्र) नमो अरहतो महावीर(अ) स्य् (अ) देवनासस्या- २, पुर्वृव्, (ओ) य् (ए) अयूय—र् (ओ) ह् (अ) नियतोगण (तो) प् (अ) रि (हास क् (अ) कुल (तो) प् (ओन्न) अप् (अ) त्रिकात् (ओ) साखातोगण (इ) स्य अर्यूय—देवदत्त (स्य) न......इसका तरजुमा नीचे लिखे मुजव होवेगा.

"फतेह" देवतायोंका नाश करता अरहत महावीरकों प्रणाम (यह गुणवाचक नामके ख-रेपणेमें मेरेकों वहुत शकहै, परंतु तिसका सुधा-रा करनेकों में असमर्थहूं) राजा वासुदेवके संव

त्के ए७ मे वर्षमें वर्षाऋतुके चौथे महीनेमें मिति ११ मीमें इस मितिमें ....परिहासक (कुल) में कापोन पत्रिका (पौर्णपत्रिका) शाखा का अरयूय–रोहने (आर्यरोहने) स्थापन करी शाला (गण) मेंका अरयय देवदत (देवदत्त) ए शालाका मुख्य गणि ॥ येह लेख एकठ्ठे देखनेसे यह सिद्ध करतेहैके मथुराके जैन साधुयोंने संवत् ५ सें ए७ अठानवें तक वा इसवीसन ७३ । वा ७४ से लेके सन इसवी १६६ वा १६७ के बीचमे जैनधर्माधिकारी हुदेवालोंने परस्पर एक संप क राथा, और तिनमेंसे कितनेक गच्छोंमें मतानुचारीयोमें विभाग पमाथा, और सो भाग हरेक शाला (गण) का कितनेक तिसके अंदर भाग हूएथे. ऊपर लिखे हूए नामों वाले पुरुषांको वाचक अथवा आचार्यका इलकाब मिलताहै, जो बुद्धिष्ट

भाणकके साथ मिलताहै और सो इलकाब (पद वीका नाम) बहुत प्रसिद्ध रीतीसे जैनके जो यति लोक साधु धर्म संबंधी पुस्तको श्रावक साधुयों कों समझने लायक गिणनेमें आतेथे तिनकों देनेमें आतेथे, परंतु जो साधु गणि (आचार्य) एक गच्छका मुखीया कहनेमें आताथा, तिसका यह भारी इलकाब था, और हालमेंभी पिछली रीती प्रमाणे बडे साधु मुख्य आचार्यकों देनेमें आता है. शाखा [गणो] मेसे कोटिक गणके बहुत फांटे है, और तिसके पेटे भाग होके दो कुल, दो शाखायों और एक भत्ति हुआहै, इस वास्ते तिसका बडा लंबा इतिहास होना चाहिये, और यह कहना अधिक नही होवेगा, क्योंकि लेखोंके पुरावे ऊपरसें तिसकी स्थापना अपणे ईसवी सनकी शूरुआतसें पहिले थोडेमें थोडा काल एक सैंक-

म्रा [नो वर्ष] में हूइथी, वाचक और गणि सरी थेइलकावोंकी तथा ईसवी सन पहिले सैकेके अंतमें असलकी शालाकी हयाती वतलावंहैके तिस वखतमें जैन पंथकी वहुत मुदत हुआं चलती आत्मज्ञानीकी हयाती हो चुकीथी [कितनेहीका लसे कंठाग्र ज्ञानवान् मुनियोंकि परंपरायसे संतति चली आतीथी] तिस संततिमें साधु लोक तिस वखतमें अपने पंथकी वृद्धिकी वहुत हुस्यारीसें प्रवृत्ति राखतेथे, और तिस कालसे पहिलेभी राखी होनी चाहिये, जेकर तिनोमें वाचक थे तो यहभी संभवितहैके कितनेक पुस्तक वंचानेसीखाने वास्ते वरावर रीतीसें मुकरर करा हूआ संप्रदाय तथा धर्म सवंधी शास्त्रभी था. कल्पसूत्रके साथ मिलनेसें येह लेखों श्वेतांवरमतकी दंत कथाका एक वमा भागकों [श्वेतांवरके

शास्त्रके वर्म भागकों] बनावटके शक [कलंक] सें मुक्त करते है, [श्वेतांवर शास्त्रके बहुत हिस्से बनावटके नही है किंतु असली सच्चे है] और स्थिविरावलिके जिस भाग ऊपर हालमे हमअ ख्तियार चलाशक्ते है, सो भाग निःकेवल जैन- के श्वेतांवर शाखाकी वृद्धिका भरोसा राखने ला यक हवाल तिसमे हयाती साबीत कर देता है, और तिस भागमेंभी ऐसीयां अकस्मात् भूले तथा खामीयों मालुम होती है, के जैसे कोइ कं- गाम्रकी दंत कथाकों हालमे लिखता हुआबीचमें- रही जाए ऐसें हम धार सक्तेहै, यह परिणाम (आशय) प्रोफेसर जेकोबी और मेरी माफक जे सख्स तकरार करता होवे के जैन दंत कथा (जैन श्वेतांवरके लिखे हुए शास्त्रोंकी बात) टी काके असाधारण कायदे हेठ नही रखनी चाहि

ये, अर्थात् तिसमेके इतिहास सबंधी कथनो अ·
थवा दूसरे पंथोकी दतकथामेसे मिली हुइ दूसरी
स्वतंत्र खबरोंसें पुष्टी मिलती होवे तो, सो मा
ननी चाहिये; और जो ऐसी पुष्टी न होवे तो
जैनमतकी कहनी (स्यादवा) तिसकों लगानी
चाहिये, तैसे सखसोंको उत्तेजन देनेवाला है. क·
ल्पसूत्रकी साथ मथुरांके शिला लेखोंका जो मि
लतापणा है, सो दुसरी यह बातभी तब लाता
है कि इस मथुरां शहरके जैनलोक श्वेतांबरी थे॥
इति म्हाक्तर बूलर ॥ अब हम (इस ग्रंथके कर्त्ता)
भी इन लेखोंकों वांचके जो कुछ समजे है सोइ
लिख दिखलाते है ॥ जैनमतके वाचक १ दिवा·
कर २ क्षमाश्रमण३ यह तीनो पदके नाम जो
आचार्य इग्यारे अंग, और पूर्वोके पढे हुएथे ति
नकों देनेमें आतेथे, जैसें उमास्वातिवाचक १

सिद्धसेन दिवाकर २ देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण ३;
इस वास्ते मथुराके शिला लेखोंमें जो वाचकके नामसें आचार्य लिखे है, वे सर्व इग्यारे अंग और पूर्वोके कंठाग्र ज्ञानवाले थे, और सुस्थित नामे आचार्यका नाम बुलरसाहिबने लिखाहै सो सूस्थित नामे आचार्य विरात् तीसरे सैकेमेंहुआ है, तिससें कोटिक गणकी स्थापना हुइ है, और जो वइरी शाखा लिखी है सो विरात् ५८५ वर्षे स्वर्ग गये, वज्रस्वामीसें स्थापन हुइथी वइरी शाखाके विना जो कुल और शाखाके आचार्य स्थापनेवाले सुस्थित आचार्यके लगभग कालमें हुए संभव होतेहै, इन लेखोंकों देखके हम अपने भाइ दिगंबरोंसे यह विनती करते है कि जरा मतका पक्षपात छोडके इन लेखोंकी तर्फ जरा ख्याल करोके इन लेखोमें लीखे हुए गण, कुल शाखाके

तुम लोक शास्त्रांके अर्थ तो जिनप्रतिमाके अधिकारमें स्वकल्पनासे जूठे करके जिन प्रतिमाकी उछापना करतेहो, परंतु यह शिला लेख तो तुमारेसें कदापि जूठे नही कहे जाएंगे, क्योंके इन शिला लेखोंको सर्व यूरोपीयन अंग्रेज सर्व विद्वानोने सत्य करके मानेहै, इस वास्ते मानुष्य जन्म फेर पाना दुर्लभहै, और थोमे दिनकी जिंदगीहै, इस वास्ते पक्षपात गेमके तुम सच्चा धर्म तप गछादि गछोंका मानो, और स्वकपोल कल्पित वाविस २२ टोलेका पंथ और तेरापंथीयोका मत गेम देवो, यह हित शिक्षा मैं आपकों अपने प्रिय बंधव मानके लिखी है. ॥

प्र. १५८–हमारे सुननेमे ऐसा आया है कि जैनमतमे जो प्रमाण अंगुल (नरत चक्रीका अं-

अंगुल)सें चारसो गुणा अधिक है, इस वास्ते उत्सेधांगुलके योजनसें प्रमाणांगुलका योजन चारसौ गुणा अधिक है, ऐसे प्रमाण योजनसें ऋषभदेवकी विनीता नगरी लांबी बारां योजन और चौमी नव योजन प्रमाणथी जब इन योजनाके उत्सेधांगुलके प्रमाणसें कोस करीये, तब १४४०० चौद हजार चारसौ कोस विनीता चौमी और १७२०० कोस लंबी सिद्ध होती है, जब एक नगरी विनिता इतनी बमी सिद्ध हूइ, तबतो अमेरिका, अफरीका, रूस, चीन, हिंदुस्तान प्रमुख सर्व देशोंमें एकही नगरी हूइ, और कितनेक तो चारसौ गुणेमेंज्ञी संतोष नही पातेहै, तो एक हजार गुणा उत्सेध योजनसे प्रमाण योजन मानते है, तब तो विनाता ३६००० हजार कोस चौमी और ४८००० हजार कोस लांबी सिद्ध होती है, इस

कालके लोकतो इस कथनको एक मोटी गप्प स मान समझेंगे,इस वास्ते आपसे यहप्रश्न पूछते है कि जैनमतके शास्त्र मुजब आप कितना बडा प्रमाण अंगुलका योजन मानतेहो ?

उ. जैनमतके शास्त्र प्रमाणे तो विनीता नगरी और द्वारकाका मापा और सर्व द्वीप, समुद्र, नरक, विमान. पर्वत प्रमुखका मापा जिस प्रमाण योजनसे कहाहै सो प्रमाण योजन उत्सेधांगुलके योजनसें दश गुणा और श्रीमहावीरस्वामीके हाथ प्रमाणसें दो हजार धनुषके एक कोस समान (श्री महावीरस्वामीके मापेसें सवा योजन) पांच कोस जो क्षेत्र होवे सो प्रमाण योजन एक होता है, ऐसे प्रमाण योजनसें पूर्वोक्त विनीता जंबू द्वीपादिका मापा है, इस हिसाबसें विनीता द्वारकादि नगरीयां श्री महावीरके प्रमा

एके कोस चोमीयां ४५ पैतालीस कोस और लंबीया साठकोस प्रमाण सिद्ध होतीयां हे इतनी वमी नगरीको कोइन्नी बुद्धिमान् गप्प नही कह सकताहे, क्योंकि पीछले कालमें कनोज नगरीमें ३०००० तीस हजार डुकानो तो पान वेचनेवालों की थी, ऐसे इतिहास लिखनेवाले लिखतेहै तो, सो नगर वहुत वमा होनां चाहिए, अन्यन्नी इस कालमें पैकिन लंदन प्रमुख वमेवमे नगर सुने जातेहै सो चौथे तीसरे आरेके नगर इनसें अधिक वमे होवे तो क्या आश्चर्य है, और जो चारसौ गुणा तथा एक हजार गुणा उत्सेधांगुलके योजनसे प्रमाणांगुलका योजन मानतेहै, वे शास्त्रके मतसें नहीहै, जो श्री अनुयोगद्वार सूत्रके मूल पाठमें ऐसा पाठ है, उत्सेधांगुलसें सहस्स गुणं परमाणंगुलं नवति इस पाठका यह अनि-

प्रायहै, कि एक प्रमाणांगुल उत्सेधांगुलसें चारसौ गुणीतो लांबी है, और अढाइ उत्सेधांगुल प्रमाण चौडी है, और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडी [मोटी] है, इस प्रमाण अंगुलके जब उत्सेधांगुल प्रमाण सूची करीये तब प्रमाणांगुलके तीन टुकडे करीये, तब एक टुकडा एक उत्सेधांगुल प्रमाण चौडा और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडा (मोटा) और चारसौ उत्सेधांगुलका लंबा होता है, ऐसाही दूसरा टुकडा होता है, और तीसरा टुकडा एक उत्सेधांगुल प्रमाण चौडा और इतनाही जाडा (मोटा) और दोसो उत्सेधांगुल प्रमाण लंबा होता है, अब इन तीनों टुकडोकों क्रमसें जोडीये तब एक उत्सेधांगुल प्रमाण चोडी और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडी (मोटी) और एक हजार उत्सेधांगल प्रमाण लांबी सूची होती

है, अनुयोगद्वारमें जो मूल पाठ हजार गुणी कहता है, सो इस पुर्वोक्त सूचीको अपेक्षासे कहता है, परंतु प्रमाणांगुलका स्वरूप नही है, प्रमाणा जैसी ऊपर चारसौ गुणी लिख आएहै तैसा हैं, इस चारसौ गुणी प्रमाणांगुलसें ऋषभदेव भरतकी अवगाहनादिका मापा है, परंतु विनीता, द्वारकां, पृथ्वी, पर्वत, विमान, द्वीप, सागरोका मापा हजार गुणी वा चारसौ गुणी अंगुलनें नही है, इन नगरी द्वीपादिकका मापा तो प्रमाणांगुल अढाइ उत्सेधांगुल प्रमाण चौडी है तिससें मापा करा है, यह जैनमतके सिद्धांतकारोका मत है, परंतु चारसौ तथा एक हजार गुण उत्सेधांगुल सें विनीता, द्वारकां, द्वीप, सागर, विमान, पर्वतोका मापा करनां यह जैन सिद्धांतका मत नही है, यह कथन जिनदास गणि क्षमाश्रमणजी श्री

अनुयोगद्वारकी चूर्णिमें लिखते है, तथा च चूर्णिका पाठः जेअपमाणंगुलाउपुढवायपमाणाआणिज्जंति तेअपमाणंगुलविरकंभेणआणेयव्वानपुण सूइ अगुलेणंतिएयंचविवत्तगुणएणकेइएअस्सजंपुणमिणंतिअन्नेउसूइअंगुलमाणेणनसुत्तञ्जाणियंतं ॥ इस पाठकी भाषा ॥ जिस प्रमाणांगुलसें पृथ्वी, पर्वत द्वीपादिका प्रमाण करीये है सो प्रमाणांगुलका जो विरकंभ (चौडापणा) अढाइ उत्सेध आंगुल प्रमाणसें करनां, परंतु सूची आंगुलसें पृथ्वी आदिकका प्रमाण न करनां, और कितनेक ऐसें कहते है कि एक प्रमाणांगुलमें एक हजार उत्सेधांगुल मावे, ऐसे प्रमाणांगुलसें मापनां, और अन्य आचार्य ऐसें कहता है कि उत्सेधांगुलसे चारसौ गुणी ऐसें प्रमाणांगुलसें पृथ्वी आदिकका मापा करनां, अब चूर्णिकार कहता है कि ये दोनो मत

हजार गुणी अंगुल और चारसौ गुणी अंगुलके मापेसें पृथ्वी आदिकके मापनेके मत, सूत्र उक्त नही (सिद्धांत सम्मत नही)है, और अंगुल सत्तरी प्रकरणके कर्त्ता श्री मुनिचंद्र सूरिजी(जो के विक्रम संवत् ११६१ मे विद्यमान थे)इन पूर्वोक्त दोनो मतोंको दूषण देतेहै तथाच तत्पाठः ॥ किंचमयेसुदोसुविमगहंगकलिंगमाइआ सव्वेपायेणारियदेसाएगमियजोयणेहुंति ॥ १६ ॥ गाथा इसकी व्याख्या ॥ जेकर ऐसें मानीयेंके एक प्रमाण अंगुलमें एक सहस्त्र उत्सेधांगुल अथवा चारसौ उत्सेधांगुल मावे, ऐसे योजनोंसे पृथ्वी आदिक मापीए, तवतो प्राये मगधदेश, अंगदेश, कलिंगदेशादि सर्व आर्य देश,एकही योजनमें मा जावेंगे, इस वास्ते दशगुणे उत्सेधांगुलके विस्कंभपणेसें मापना सत्य है, इस चर्चासें अधिक

पांचसौ धनुषकी अवगाहना वाले लोक इस गे टेसें प्रमाणवाली नगरीमे क्योंकर मावेंगे, और द्वारकांके करोमों घर कैसें मावेंगे, और चक्रवर्त्ती के गनवे ९६ करोड गाम इस गेटेसे भरतखंममें क्योंकर वसेंगे, इनके उत्तर अंगुलसत्तरीमे बहूत अछीतरेंसे दीने है, सो अंगुलसत्तरी वांचके देखनां; चिंता पूर्वोक्त नही करनी, यह मेरा इस प्रश्नोत्तरका लेख बुद्धिमानोंकों तो संतोषकारक होवेगा, और असत् रूढीके माननेवालोंको अचंभा जनक होवेगा, इसी तरे अन्यभी जैनमतकी कितनीक वाते असतरूढीसें शास्त्रसें जो विरूद्ध है, सो मान रक्की है, तिनका स्वरूप इहां नही लिखते है.

प्र. १५९–गुरु कितने प्रकारके किस किस कीउपमा समान और रूप १ उपदेश २ क्रिया

३ कैसी और कैसेके पासों धर्मोपदेश नही सुननां, और किस पासों सुननां चाहिये.

उ.–इस प्रश्नका उत्तर सपूर्ण नीचे मुजब समझ लेनां.

एक गुरु चास (नीलचास) पक्षी समान है १

जैसे चाष पक्षीमे रूप हे, पांच वर्ण सुंदर होनेसें और शकुनमेंभी देखने लायक है ? परंतु उपदेश (वचन) सुंदर नही है, २ कीडे आदिके खानेसें क्रिया (चाल) अच्छी नही है ३ तैसेही कितनेक गुरु नामधारीयोमें रूप (वेष) तो सुविहित साधुका है १ परं अशुद्ध (उत्सूत्र) प्ररूपनेसें उपदेश शुद्ध नही २ और क्रिया मूलोत्तर गुण रूप नही

पांचसौ धनुषकी अवगाहना वाले लोक इस छो टेसें प्रमाणवाली नगरीमे क्योंकर मावेंगे, और द्वारकांके करोमो घर कैसें मावेंगे, और चक्रवर्त्ती के ग्रानवे ९६ करोड गाम इस छोटेसे जरतखंममें क्योकर वसेंगे, इनके उत्तर अंगुलसत्तरीमे वहूत अछीतरेसे दीने है, सो अंगुलसत्तरी वांचके देखनां; चिंता पूर्वोक्त नही करनी, यह मेरा इस प्रश्नोत्तरका लेख बुद्धिमानोंको तो संतोषकारक होवेगा, और असत् रूढीके माननेवालोंको अचंभा जनक होवेगा, इसी तरे अन्यन्नी जैनमतकी कितनीक वाते असतरूढीसें शास्त्रसें जो विरूद्व है, सो मान रक्खी है, तिनका स्वरूप इहां नही लिखते है.

प्र. १५९–गुरु कितने प्रकारके किस किस कीउपमा समान और रूप १ उपदेश २ क्रिया

है, प्रमादसें निरवद्याहारादि नही गवेषण करते है ३ यडुक्तं॥ दगपाणपुप्फफलंअणेसणिज्जं गिहत्थकि च्चाइंअजयापडिसेवतिजइवेसविडंबगानरं॥ १ ॥ इत्यादि ॥ अस्यार्थः ॥ सचित पाणी, फूल, फल, अनेषणीय आहार ग्रहस्थके कर्त्तव्य जिवहिंसा १ असत्य २ चोरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ रात्रिभोजन स्नानादि असयमी प्रति सेवतेहै, वेभी गृहस्थ तुल्यही है, परंतु यतिके वेषकी विटंवना करनेसें इस वातसे अधिक है, ऐसे तो संप्रति कालमें दुःखम आरेके प्रभावसें बहूत है, परंतु तिनके नाम नही लिखते है, अतीत कालमेंतो ऐसे कु-लवालादिकोंके दृष्टांत जान लेने, कुलवालकमें सुविहित यतिका वेषतो था, १ परं मागधिक ग-णिकाके साथ मैथुन करनेमें आशक्त था, इसवा-स्ते अच्छी क्रिया नहीथी २ और विशालाभंगादि म-

तीसरा गुरु भ्रमर समान है. ३

भ्रमरमें सुंदर रुप नही, कृष्ण वर्ण होनेसें १ उपदेश (तिसका उदात्त मधुर स्वर) नही है २ केवल क्रियाहै उत्तम फूलोंमेंसें फूलोंको विना दुख देनेसे तिनका परिमल पीनेसें ३ तैसेही कितनेक गुरू यतिके वेषवालेभी नहीहै १ और उपदेशक भी नही है २ परंतु क्रिया है, जैसें प्रत्येक बुद्धादिकोंमे प्रत्येकबुद्ध, स्वयंबुद्ध तीर्थंकरादि यद्यपि साधुतो है, परंतु तीर्थगत साधुयोंके साथ प्रवचन १ लिंगसें साधार्मिक नहीहै, इस वास्ते यति वेषभी नही १ उपदेशकभी नही २ " देशनाऽनासेवक. प्रत्येकबुद्धादि रित्यागमात् " क्रियातो है, क्योंकि तिस भवसेंही मोक्ष फलहोताहै ॥ इति तृतियो गुरु स्वरूप भेद ॥ ३ ॥

प्रमादके सेवनेसें २ परंतु उपदेश शुद्ध मार्ग प्ररू पण रूप है ३ प्रमादमे पड़े और परिव्राजकके वेषधारी ऋषभ तीर्थंकरके पोते मरीच्यादिवत् अथवा पासत्थे आदिवत् क्योंकि पासत्थेमें साधु समान क्रिया तो नही है १ और प्रायें सुविहित साधु समान वेषभी नही, यडुक्तं॥ वत्थंडपडिले हियमपाणसकन्निग्रंडकूलाई इत्यादि॥ अर्थः--वस्त्र उप्रति लेखित प्रमाण रहित सादशक पत्थेवडी र- खनेसें सुविहितका वेष नही २ परं शुद्ध प्ररूपक है, एक यथाछंदेकों वर्जके पासत्था १ अवसन्ना २ कुशील ३ संसक्त ४ ये चारों शुद्ध प्ररुपक होस- क्तेहै, परंतु दिन प्रतिदश जणोका प्रतिबोधक नं- दिषेणसरीषे इस भांगेमे न जानने, क्योंके नं- दिषेणके श्रावकका लिंग था ॥ इति दुसरा गुरु स्वरूप भेद ॥ २ ॥

तीसरा गुरु भ्रमर समान है. ३

भ्रमरमें सुंदर रुप नही, कृष्ण वर्ण होनेसें १ उपदेश (तिसका उदात्त मधुर स्वर) नही है २ केवल क्रियाहै उत्तम फूलोंमेंसें फूलोंकों विना दुख देनेसे तिनका परिमल पीनेसें ३ तैसेही कितनेक गुरू यतिके वेषवालेभी नहीहै १ और उपदेशक भी नहीं है २ परंतु क्रिया है, जैसें प्रत्येक बुद्धा दिकोंमें प्रत्येकबुद्ध, स्वयंबुद्ध तीर्थंकरादि यद्यपि साधुतो है, परतु तीर्थंगत साधुयोंके साथ प्रवचन १ लिंगसें साधार्मिक नहीहै, इस वास्ते यति वेषभी नही १ उपदेशकभी नही २ " देशनाऽनासेवकः प्रत्येकबुद्धादि रित्यागमात् ' क्रियातो है, क्योंकि तिस भवसेंही मोक्ष फलहोताहै ॥ इति तृतियो गुरु स्वरूप भेद ॥ ३ ॥

चोथा गुरु मोर समान है. ४

जैसें मोरमे रुपतो पंच वर्ण मनोहर १ और शब्द मधुर केकारुप है २ परं क्रिया नही है, सर्प्पादिकोंकोंभी भक्षण कर जाता है, निर्दय होनेसें ३ तैसें गुरुयों कितनेकमें वेष १ उपदेशतो है २ परंतु सत्क्रिया नही है, ३ मंग्वाचार्यवत् ॥ इति चौथा गुरु स्वरुप भेद ॥ ४ ॥

पांचमा गुरु कोकीला समान है. ५

कोकिलामे सुंदर उपदेश (शब्द) तो है, पंचम स्वर गानेसें १ और क्रिया आंबकी मांजरादि शुचि आहारके खाने रूपहै. तथा चाहुः॥ आहारे शुचिता, स्वरे मधुरता, नीडे निरारंभता ॥ वंधौ निर्ममता, वने रमिकता, वाचालता माधवे॥ त्यक्ता तद्विज कोकिलं, मुनिवरं दूसरात्पुनर्दाभिकं

वंदंते वत खंजनं, कमि त्रुजं चित्रा गतिः कर्म णां ॥१॥ परंतु रुप नही काकादिसेंनी हीनरुप होनेसें ३ तैसेंही कितनेक गुरुयोमें सम्यक् क्रिया १ उपदेश २ तोहै, परंतु (साधुका वेष) किसी हेतुसे नही है, सरस्वतीके बुझाने वास्ते यति वेष त्याग कालिकाचार्य वत् ॥ इति पांचमा गुरु स्वरुप नेद ॥ ५ ॥

छठा गुरु हंस समान है. ६

हंसमे रुप प्रसिद्ध है १ क्रिया कमल नाला दि आहार करनेसें अच्छीहै २ परंतु हंसमें उपदेश (मधुर स्वर) पिक शुकादिवत् नही है ३ तैसेंही कितने एक गुरुयोंमे साधुकावेष १ सम्यक् क्रियातो है २ परंतु उपदेश नही, गुरुने उपदेशकरनेकी आज्ञा नही दीनी है, अनधिकारी होनेसें

और जे भंग अशुद्धोपदेशक है, वेता अपनेकों और श्रोताकों संसार समुद्रमें डुबोनेही वाले है, इस वास्ते सर्वथा त्यागने योग्य है, और शुद्धोप देशक, क्रियावान् पक्ष कोकिलाके दृष्टांत सूचित्त अंगीकार करने योग्य है भीक योगवाला पक्ष तोतेके दृष्टांत सूचित सर्वसें उत्तमहै। और शुद्ध प्ररूपक पासत्थादि चारोंके पास उपदेश सुनना भी शुद्ध गुरुके अभावसें अपवादमें सम्मत है.

प्र. १६०–इस जगतमें धर्म कितने प्रकारके और कैसी उपमासें जानने चाहिये.

उ. इस प्रश्नोत्तरका स्वरुप नीचेके लिखे यंत्रसें जानना धर्म पांच प्रकारका है.

एक धर्म कं भेरी वन स मानहै, जैसें	इस वन समान नास्तिक मतियों का माना हुआ धर्म है सर्वथा थो- कासाभी शुभ फल नही देता है

कंथेरीवननिष्फल है. सर्वप्रकारमें केवल कांटो करके व्याप्त होनेसे लोकोंको विदारणादि अनर्थ जनक होता है, और तिस वनमे प्रवेशनिर्गमनभी दुष्कर है ॥१॥

और परभवमें नरकादि गतियोंमें दुख अनर्थको देता है, और इस लोकमें लोक निंदा ! धिक्कार नृप दंडादिके भयसे इस कुकर्मी नास्तिक मतमे प्रवेश करना मुशकल है. और जो इस मतमे प्रवेश कर गये है, तिनको स्व इच्छानुसार मद्य मांसादि भक्षण मात, बहिन बेटीकी अपेक्षा रहित स्त्रीयोंसे भोगादि विषयके सुस्वादके सुखकी लपटतासे तिस नास्तिक मतमेंसे निकलनाभी मुशकल है, इस वास्ते यह धर्म सर्वथा सुज्ञ जनोको त्यागने योग्यहै, इस मतमें धर्मके लक्षणतो नहीहै, परंतु तिसके माननेवाले लोकोंने धर्म मान रक्खा

है, इस वास्ते इसका नामभी धर्महीलिखाहै॥ इति प्रथम धर्म भेद ॥१॥

एकधर्मशम्मी खेजड़ी वंबूल कीकर खदिर वेरीकरीरादि करके मिश्रित वन समानहै यह वन विशिष्ट शुभ फल नही देता है किंतु सांगरी वब्बूल फलादि सामान्य	इस वन समान बौद्धांका धर्म है. क्योंकि ब्रह्मचर्यादि कितनीक सत् क्रिया और ध्यान योगाभ्यासादिकके करनेसें मरां पीछे व्यंतर देवताकी गतिमें उत्पन्न होनेसें कुछक शुभ सुख रूप फल भोगमें देताहै, तथा चोक्तं बौद्ध शास्त्रे ॥मृद्वीशय्या प्रातरुत्थाय पेया॥ भक्तं मध्ये पानकंचा परान्हे॥ द्राक्षा पाणं शर्कराभार्द्धरात्रौ॥ मोक्षश्चांत शाक्य पुत्रेण दृष्टः॥१॥ मणुन्न भोयणं, भुच्चा, मणुन्न सयणासणं मणुन्नं, सिअगारंसि मणुन्नं, झायए मुणी ॥२॥ इत्यादि॥ बौद्ध मतके शा

नीरसफल देतेहै, सांगरी पक्षी शुष्क हुइ होइ किंचित् प्रथम खाते हूएभी ठी लगती है परंतु कटकाकीर्ण होनेसें विदारणादि अनर्थका हेतु होवेहै ॥२॥

स्वानुसारे अपने शरीरको पुष्टकरनां, मनके अनुकूल आहार शय्यादिकके भोगमें और बौद्धभिक्षुके पात्रमें कोइ मांस डे देवे तो तिसकोभी खा लेनां स्नानादिकके करनेसे पांचोइंद्रियोंके पोषनरूप और तप न करनेसें आदिमे तो मीठा (अच्छा) लगता है, परंतु भवांतरमें दुर्गति आदिक अनर्थ फल उत्पन्न करताहै, इस वास्ते यह धर्मभी त्यागने योग्य है॥ इति दूसरा धर्म भेद ॥ २ ॥

एक धर्म पर्वतके वनतथा जंगली वन

इस वन समान तापस १ नैयायिक वैशेषिक, जैमनीय, सांख्य, वैश्नवआदि आश्रित सर्व लौकिक धर्म और

समानहै,इस
वनमे थोहर,
कंथेरी कुमा
र प्रमुखके फ
ल देनेवालेवृ
क्षहै औरकं-
टकादिसें वि
दारण करणे
से अनर्थके
ज्ञो जनकहै
१ औरकित-
नेक धव स
ल्लकीके सुप-
लाश पनस
सी समादि वृ

चरक परिव्राजक इनके विचित्र पणे-
सें विचित्र प्रकारका फलह सोइ दि-
खाते है, कितनेक वेदोक्त महा यज्ञ,
पशुवधरुप स्नान होमादि करके धर्म
मानते है, वे कंथेरी वनवत् है. परन्न-
वमें अनर्थरूप जिनका प्राये फल हो-
वेगा. और कितनेक तो तुरमणीश
दत्तराजाकी तरे निकेवल नरकादि
फलवाले होते है । तथा श्लोक आर-
एयके ॥ षेवैश्हयथा २ यज्ञेषुपशुन्निशं
सतिततथा २ इत्यादि ॥ तथाशुकसं-
वादे ॥यूपं छित्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा
रुधिर कर्दमं, यद्येव गम्यते स्वर्गे नर
के केन गम्यतेः ॥१॥ स्कंधपुराणे ॥
वृक्षां छित्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा रु-

कहै, इनकेफ
लतो निःसा
रहै परंतु वि
शिष्ट अनर्थ
जनकनहीहै
२ ओर कित
नेक वेरी खे
जमी खयरा
दि निःसार-
अशुभफलदेते
हैकटकोंसेवि
दारणादि अ
निष्ठके जन-
कभीहोते है
३औरकितने

धिर कर्दमं, दग्ध्वा वन्हौ तिलाज्यादि
चित्रं,स्वर्गोंभिलष्यते ॥ १ ॥कितनेक
अपात्रको अशुद्ध दान गायत्र्यादिके
जापादि धव पलाशादिवत् प्राय फल
देने वालेभी सामग्री विशेष मिले किं
चित् फलजनक है, परं अनर्थ जनक
नही, विवक्षितहै इस, स्थलमेंप्रतिदिन
नक्त दान देनेवाला मरके हाथी हूए
सेठवत्, तथा दानशालादि करानेवाले
नंदमणिकारवत् और सेचनक हाथीके
जीव लक्ष भोजी ब्राह्मणवत् दृष्टांत
जानने ॥२॥ कितनेक तो सावद्य (स
पाप) अनुष्ठान, तप, नियम दानादि
अन्यायसें द्रव्योपार्जन करी कुपात्रदा
नादि वेरी खेजमीवत् किंचित् राज्या

उ एसें तार तम्यतासें अ धम, मध्यम उत्तम वृक्षों की विचित्र-तासें पर्वतके वनोंकी भी विचित्रताजा ननी ॥ ३ ॥	परिव्राजक पूर्ण तापसवत् तथा जैन अति सरोस गोरव प्रमाद संयमीआ दि मंगुकी वध करनेवाले क्षपक मुनि मंगु आचार्यादिवत् ॥ ६ ॥ कितनेक तामलि ऋषिकी तरें उग्र तप करने-वाले चरक परिव्राजकादि धर्मवाले आंबादि वृक्षोंवत् ब्रह्मदेवलोकावधि सुख फल देतेहै ॥७॥ ये सर्व पर्वतके वन समान कथन करे, परंतु सम्यग् दृष्टीकों ये सर्व त्यागने योग्यहै ॥ इति तीसरा धर्म भेद ॥ ३ ॥
एक धर्म नृपवन समान श्रावक धर्महै राजके वनमे	इस वन समानश्राद्ध(श्रावक)धर्म सम्यक्त्व पूर्वक बारांव्रताकी अपेक्षा तेरासौकरोड़ अधिक भेद होनेसें वि-चित्र प्रकारका सम्यग् गुरु समीपे अं-

अंब, जंबू रा-
जादनादि ज
घन्य वृक्ष हैं
कला, नाली
केर, सोपारी
आदि मध्यम
माधवी लता
तमाल एला
लवंग चंदना
गुरुतगरादय
उत्तम चंपक
राज चंपक
जाति पाढ-
लादि फूल त
रु विचित्र है,

गीकार करनेसे परिगृहीतहै, अज्ञान
मए लोकिक धर्मसें अधिकहै, और अ
तिचार विषय कषायादि चौर श्वाप-
दादिकोंसें सुरक्षितहै, और गुरु उप-
देश आगमाभ्यासादि करके सदा सु-
सिंच्य मानेहै, सौ धर्म देवलोककें
सुख जघन्य फल है, सुलभबोधि
होनेसें और निश्चित जलदी सिद्धि सु-
खांके देनेवाले होनेसें और मिथ्या-
त्वीके सुखास बहुत सुभग आनंदा
दि श्रावकोंकी तरें देतेहै, और उत्क-
र्षसें तो जीर्ण सेठादिकी तरे बारमे
अच्युत देवलोकके सुख देतेहै ॥ इस
वास्ते बारांव्रत रूप श्राद्ध (श्रावक)
धर्म यत्नसें अंगीकार गृहस्थ लोकोंने

वनवाए १६ सोलसौ १६०० जीर्ण जिन मंदिरो-
का उद्धार कराया १७ सातवार तीर्थ यात्रा करी
१८ ऐसे अम्यक्तकी आराधना करी ॥ पहिले वृ-
तमे सपराधी विना मारो ऐसे शब्दके कहनेसे
एक उपवास करनां १ दूसरे व्रतमें भूलसें जुठ
बोला जावे तो आचाम्लादि तप करना २ तीसरे
व्रतमें निसंतान मरेका धन नही लेनां ३ चौथे
व्रतमें जैनी हुआ पीछे विवाह करणेका त्याग और
चौमासेके चार मास त्रिधा शील पालनां, मनसें
भंगे एक उपवास करनां वचनसे भंगे एकाचा-
म्ल, कायसें भंगे एकाशन. एक परनारी सहोदर
बिरुद धरनां भोपलदेवी आदि आठ राणीयोंके
मरे पीछे प्रधानादिकोंके आग्रहसेभी । क-
रनां नही, ऐसा नियम भंग नही
कार्य सोनमयि भोपलदेवीकी मूर्त्ति

हेमचंद्रसूरिजीए वासक्षेप पूर्वक राजर्षि विरुद दीना ४ पांचमे वृतमें ७ करोडका सोना, आठ करोमका रूपा, हजार तुला प्रमाण महर्ध्य मणिरत्न, बत्तीस हजार मण घृत, बत्तीस हजार मण तेल, लक्षा शालि चने, जुवार, मूंग प्रमुख धान्योके मूंढक रक्के पांच लाख ५००००० अश्व, पांचहजार ५०००, हाथी, पांचसौ ५०० ऊंट,घर, हाट, सन्नायान पात्र गाम्हे वाहिनीये सर्व अलग अलग पांचसौ पांचसौ रक्के. इग्यारेसो हाथी११००, पंचास हजार ५०००० संग्रामी रथ, इग्यारे लाख ११००००० घोमे; अगारह लाख १८००००० सुन्नट. ऐसें सर्व सैनका मेल रक्का. ५ छठे वृतमें वर्षाकालमें पट्टनके परिसरसें अधिक नही जाना ६ सातमें भोगोपन्नोग वृतमें मद्य, मांस, मधु, म्रक्षण, बहुबीज पंचोर्ड वरफल, अन्नक, अनंतका

य, घृत पूरादि नियम देवताके विना दीना वस्त्र, फल आहारादि नही लेनां. सचित्त वस्तुमें एक पानकी जाति तिसके बीडे आठ; रात्रिमें चारों आहारका त्याग. वर्षाकालमे एक घृत विकृती लेनी,हरित शाक सर्वका त्याग. सदा एकाशनक करनां, पर्वके दिन अब्रह्मचर्य सर्व सचित विगयका त्याग ७ आटमें वृतमें सातों कुव्यसन अपने देशसें काढ देने, ८ नवमें वृतमे जघन्य काल सामायिक करनां, तिसके करे हुइ श्रीहेमचंद्रसूरिके विना अन्य जनसें बोलनां नही. दिनप्रते १२ प्रकाश योग शास्त्रके २० वीस वीतराग स्तोत्रके पढने ए. दशमे वृतमे चतुर्मासेमें शत्रू ऊपर चढाइ नही करनी १० पोषधोपवासमें रात्रिमें कायोत्सर्ग करनां, पोषधके पारणे सर्व पोषध करनेवालों कों भोजन करानां ११ अतिथी संविभाग वृतमें

दुखिये साधर्मि श्रावक लोकांका, ७२ लक्ष द्रव्य का कर छोडनां, श्री हेमचंद्रसूरिके उत्तरनेकी धर्म शालामें जो मुखवस्त्रिकाका प्रतिलेखक साधार्मि को ५०० पांचसौ घोडे और बारां गामका स्वामी करा, सर्व मुख वस्त्रिकाके प्रतिलेखकांकों. ५०० पाचसौ गाम दीने १२ इत्यादि अनेक प्रकारकी शुभकरणी विवेक शिरोमणि कुमारपाल राजाने करीथी. यह गुरु १ धर्म २ और कुमारपालके वृ-ताके स्वरूप उपदेश रत्नाकरसें लिखे है.

प्र. १६३—इस हिंदुस्थानमें जितने पंथ चल रहेहै, वे प्रथम पीछे किस क्रममें हूएहै, जैसें आ पके जाननेमे होवे तैसे लिख दीजिये ?

उ.—प्रथम ऋषभदेवसें जैनधर्म चला१ पीछे सांख्यमत २ पीछे वैदिक कर्म कांडका ३ पीछे वे

ज्ञेयः पौरस्त्यपट्टस्य भूषणं वाग्नि भूषणं १
परंपरायां तस्यासीत् शासनोत्तेजकः प्रधीः
श्रीमद्विजयसिंहाव्हः कर्मठः धर्म कर्मणि- ३
तस्य पट्टांबरे चंद्रः विजयः सत्यपूर्वकः
अभूत् श्रेष्ठ गुणग्रामैः संसेव्यः निखिलै र्जनैः ४
पट्टे तदीयके श्रीमत् कर्पूरविजयाभिधः
आसीत् सुयशाः ज्ञान क्रिया पात्रं सदोद्यमः ५
तत्पट्ट वंश मुक्तासु मणिरीप्सितप्रदः
सिद्धांत हेमनिकषः क्षमा विजय इत्यभूत् ६
जिनोत्तम पद्म रूप कीर्त्ति कस्तूर पूर्वकाः
विजयांता क्रमेणैते बभूवुर्बुद्धिसागराः ७
तस्य पट्टाकरे चिंता मणिरीप्सितप्रदः
मणिविजय नामाऽभवत् घोरेण तपसाकृशः ८
ततोऽभूत् बुद्धि विजयः बुद्ध्यष्टगुणगुम्फितः
प्रस्तुतस्या स्मदीयस्य गच्छवर्यस्य नायकः ९

चक्रे शिष्येण तस्येयं जैन प्रश्नोत्तरावली
सद्युक्त्या श्रीमदानंद विजयेन सविस्तरा १०

५ ४ ९ १
संवत् वाण युगांऽकेंदुः पोष मास्यऽसितछदे
त्रयोदश्यां तिथौ रम्ये वासरे मंगलात्मनि ११
पल्लवि पार्श्वनाथाऽधिष्टिते प्रल्हादनेपुरे
स्थित्वाऽयं पूर्णतांनीतः ग्रंथः प्रश्नोत्तरात्मकः १२

